घड़ियों की हड़ताल

रमेश थानवी

घड़ियों की हड़ताल

रमेश थानवी

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्
NATIONAL COUNCIL OF EDUCATIONAL RESEARCH AND TRAINING

प्रथम संस्करण
जनवरी 2010 माघ 1931

PD 5T MK

© *राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, 2010*

रु. 40.00

एन.सी.ई.आर.टी. वॉटरमार्क 80 जी.एस.एम. पेपर पर मुद्रित।

प्रकाशन विभाग में सचिव, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, श्री अरविंद मार्ग, नयी दिल्ली 110 016 द्वारा प्रकाशित तथा बंगाल ऑफ़सेट वर्क्स, 335 खजूर रोड, करोल बाग, नई दिल्ली 110005 से मुद्रित।

ISBN 978-81-7450-996-3

सर्वाधिकार सुरक्षित

- प्रकाशक की पूर्व अनुमति के बिना इस प्रकाशन के किसी भाग को छापना तथा इलैक्ट्रॉनिकी, मशीनी, फोटोप्रतिलिपि, रिकॉर्डिंग अथवा किसी अन्य विधि से पुनः प्रयोग पद्धति द्वारा उसका संग्रहण अथवा प्रसारण वर्जित है।
- इस पुस्तक की बिक्री इस शर्त के साथ की गई है कि प्रकाशक की पूर्व अनुमति के बिना यह पुस्तक अपने मूल आवरण अथवा जिल्द के अलावा किसी अन्य प्रकार से व्यापार द्वारा उधारी पर, पुनर्विक्रय या किराए पर न दी जाएगी, न बेची जाएगी।
- इस प्रकाशन का सही मूल्य इस पृष्ठ पर मुद्रित है। रबड़ की मुहर अथवा चिपकाई गई पर्ची (स्टिकर) या किसी अन्य विधि द्वारा अंकित कोई भी संशोधित मूल्य गलत है तथा मान्य नहीं होगा।

एन.सी.ई.आर.टी. के प्रकाशन विभाग के कार्यालय

एन.सी.ई.आर.टी. कैंपस
श्री अरविंद मार्ग
नई दिल्ली 110 016 फोन : 011-26562708

108, 100 फीट रोड
हेली एक्सटेंशन, होस्डेकेरे
बनाशंकरी III इस्टेज
बैंगलुरु 560 085 फोन : 080-26725740

नवजीवन ट्रस्ट भवन
डाकघर नवजीवन
अहमदाबाद 380 014 फोन : 079-27541446

सी.डब्ल्यू.सी. कैंपस
निकट: धनकल बस स्टॉप पनिहटी
कोलकाता 700 114 फोन : 033-25530454

सी.डब्ल्यू.सी. कॉम्प्लैक्स
मालीगांव
गुवाहाटी 781021 फोन : 0361-2674869

प्रकाशन सहयोग

अध्यक्ष, प्रकाशन विभाग	: पेय्येटि राजाकुमार
मुख्य उत्पादन अधिकारी	: *शिव कुमार*
मुख्य संपादक	: *श्वेता उप्पल*
मुख्य व्यापार प्रबंधक	: *गौतम गांगुली*
संपादक	: *मीरा कांत*
उत्पादन सहायक	: *राजेश पिप्पल*

सज्जा एवं चित्रांकन
अमित श्रीवास्तव

आवरण
जोएल गिल

अध्याय 1

शहर में हड़ताल का मौसम था। रेलवालों ने रेलें चलानी बंद कर दी थीं। हज़ारों मुसाफ़िर प्लेटफ़ार्म पर अटके पड़े थे। हर दूसरे पल वे एक-दूसरे से पूछते थे—"हड़ताल खुली क्या?" एक हड़ताल खुलने का नाम नहीं लेती थी कि उससे पहले ही दूसरी हड़ताल का नोटिस आ जाता था।

रेलों के बाद सफ़ाई कर्मचारियों का नंबर था। सारे सफ़ाईवाले हड़ताल पर थे। हर गली-कूचे में कूड़े के ढेर लगे थे। चारों तरफ़ सड़ाँध फैली थी। मक्खियों की मौज थी। नालों और गटरों के रुक जाने से मच्छरों को मौका मिल गया था। बीमारियाँ भी शहर पर धावा बोल चुकी थीं। अस्पतालों में मरीज़ों की लाइनें लंबी होने लगी थीं।

डॉक्टरों ने मिलकर सलाह की कि मौका अच्छा है। हर आदमी हर तरफ़ जैसे अपनी बात मनवाने की ताक में बैठा था। सभी डॉक्टरों की एक राय थी कि मौका न चूका जाए। डॉक्टर भी हड़ताल पर चल दिए।

चारों तरफ़ कोहराम मचा हुआ था। बीमारी से मौतें हुई थीं। सारा शहर दुर्गंध से भरा हुआ था। परेशान अफ़सर और मिनिस्टर मीटिंगों में बैठे कोई रास्ता खोज रहे थे।

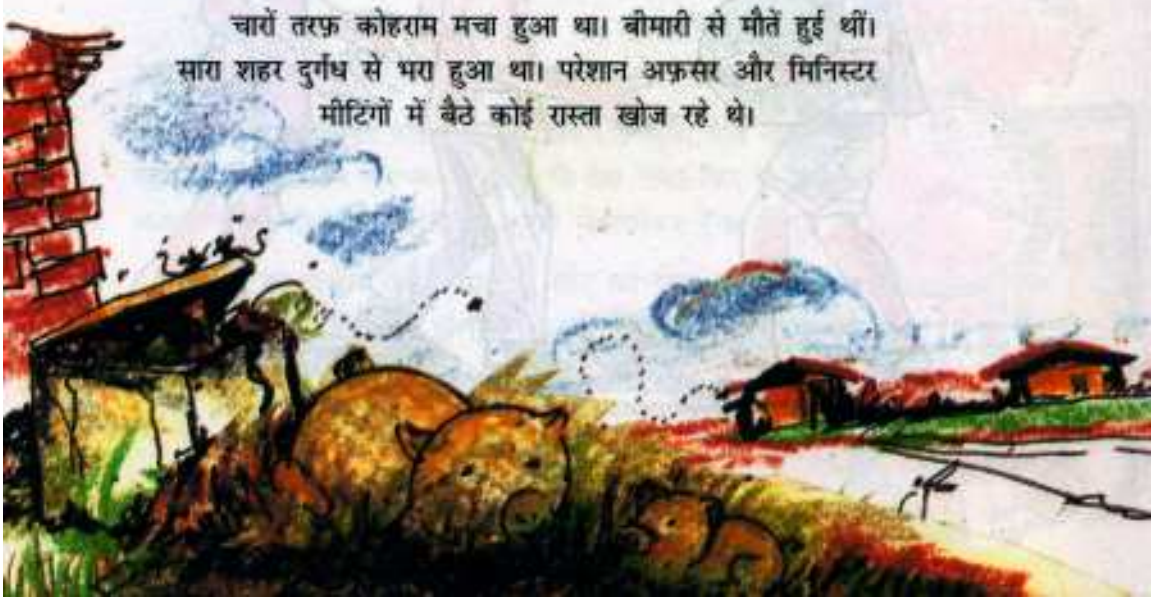

इधर एक चमत्कार हुआ। खरबूजे को देखकर खरबूजे ने रंग बदला। हड़ताल का मौसम पूरे जोश-खरोश से आ पहुँचा था, इसलिए शहर की सारी घड़ियों ने भी आपस में राय मिलाई। सबका मत था कि उनको समय के साथ चलना चाहिए। राय मिल जाने के बाद देर कैसे हो सकती थी। सारे शहर की घड़ियाँ हड़ताल पर चली गईं। समय जहाँ था, वहीं ठहर गया।

जो मिनिस्टर लोग मीटिंगों में बैठे थे, वहीं बैठे रह गए। एक-दूसरे से समय पूछने लगे तो सबने पाया कि सबकी घड़ियाँ रुकी पड़ी हैं। तुरंत दरबान बुलाए गए। सही समय की तलाश में दौड़ाए गए। 'सही समय' लेकिन सबके हाथ से निकल गया था। दरबान भी निराश होकर लौटे। सबने आकर खबर दी कि सबकी घड़ियाँ ठहरी खड़ी हैं।

हुक्म हुआ कि घड़ीसाज बुलाए जाएँ। सरकारी हुक्म सरपट दौड़ा। घड़ीसाज दौड़े आए। खबर लाए कि उनके यहाँ भी सारी घड़ियाँ रुकी हुई हैं। शहर के नामी घड़ीसाज ने घंटाघर के टॉवर पर चढ़कर पेंडुलम हिलाया—धूप के अंदाज से सूई मिलाई और गर्दन ऊँची किए देखता रहा कि सूई आगे सरकती है क्या। सूई जहाँ की तहाँ डटी थी। जरा भी सरकने का नाम न लेती थी।

इधर समय ठहर गया था, उधर फैसले ठहर गए थे। मंत्री महोदय एक से दूसरी सभा तक नहीं पहुँच सके। समय के साथ सभाएँ रुक गईं। सभाओं के साथ सफ़ाई कर्मचारियों, डॉक्टरों और रेलें चलाने वालों की किस्मत जुड़ी थी, वह भी वहीं ठहर गई।

शहर की घड़ियाँ ठहरी खड़ी थीं। कर्मचारियों की किस्मत रुकी पड़ी थी। मगर गली-कूचों में बच्चों की किलकारियाँ छूट पड़ी थीं। सभी बच्चे खुश थे। सबके चेहरे चमक रहे थे। सब अपनी खुशी बाँट रहे थे। मोटू कह रहा था–

"यार! अपनी तो किस्मत चमक गई। आज दोपहर तक सोते रहे, किसी ने कान नहीं उमेठा। किसी को हमें जगाने की नहीं सूझी। सोने की ऐसी मौज मिल जाए तो फिर क्या!" मोटू अपने सोए रहने की बात बड़ी शेखी से सुना रहा था, मगर मन ही मन घड़ियों को दाद दे रहा था। सोच रहा था, घड़ियाँ ऐसे ही रुकी रहें और अपनी नींद सलामत रहे।

मोटू का दूसरा भाई था, खोटू। उसे खेलने का खूब शौक था। वह भी जब से घड़ियाँ ठहर गई हैं, तब से घंटों खेलता रहा है। किसी को उसे बुलाने की नहीं सूझती। वह भी अपनी खुशी में लोट-पोट हो रहा था और हाँफ़ता हुआ बता रहा था–

"देख, देख, अपनी क्या लाइफ़ बनी है! मज़े से खेल जमा रहे हैं। न मम्मी की आवाज़ बुलाती है और न स्कूल की घंटी। घड़ियाँ खुद– तो चुप हुई हीं, अच्छों-अच्छों को भी चुप कर दिया।"

"अबे, ज्यादा शान मत मार। खेलने का मौका मिल गया तो अब अपनी ही हाँके जा रहा है।" खोटू का एक दोस्त कह रहा था।

"देख दोस्त! अपन फ़ालतू में नहीं हाँकते हैं कुछ। ऐसा खेल जमता रहा ना, तो चार दिन बाद अपनी सेहत भी देख लेना। फिर भी लगे कि केवल अपनी ही हाँक रहे हैं, तो कुश्ती में उतरकर देख लेना।"

कुश्ती का चैलेंज सामने आते ही खोटू का दोस्त दुबक गया था। मित्रों की यह मंडली फिर खेलने में मस्त हो गई थी। खोटू के और भी बहुत सारे दोस्त ऐसे थे, जिनको स्कूल की घंटी से चिढ़ थी। वे

सब एक जगह आ मिले। सब मिलकर हनुमान जी को नारियल चढ़ाने की योजना बना रहे थे। मनौती मना लेना चाहते थे कि घड़ियाँ रुकी रहें, घंटियाँ न बजें।

यह मंडली घंटी के बजने से इसलिए परेशान थी कि घंटी खेल के रंग में भंग डालती थी। फिर जब घंटी की चोट सुनाई देती थी, तो उन्हें मास्टर जी की डाँट याद आ जाती थी। घड़ी की सूई और मास्टर जी की डाँट-डपट में कोई निकट का रिश्ता था। सूई समय से जितनी आगे खिसकती थी, डाँट उतनी ही जोर से पड़ती थी। छोटे-बड़े सभी बच्चे मास्टर जी के गुस्से और उनकी इस डाँट से डरने लगे थे। डाँट का डर इस मंडली पर भी ऐसा सवार हो गया था कि स्कूल से दूर भागना ही सबने अपना अधिकार मान लिया था। सारी मंडली इस बात पर एक राय थी कि 'मास्टर जी अगर ज्यादा डाँटें तो पढ़ो नहीं।'

घड़ियाँ जब से रुकी हैं, तब से मोटू की नींद सलामत हो गई है और खोटू का खेल पक्का हो गया है। कहीं कोई रोक-टोक नहीं। किसी की दखल नहीं। तीसरे बच्चू बचे छोटूराम। मोटू, खोटू के छोटे भाई। इनको छोटे-छोटे किस्से-कहानियाँ पढ़ने का शौक है। जब से घड़ियाँ रुकी हैं, तब से अपने घर के एक कोने में दुबके उपन्यास, किस्से-कहानियाँ पढ़ते रहते हैं। स्कूल की तैयारी का तकाज़ा करना मम्मी भूल गई हैं। खूब मज़े से घंटों तक एक कोने में दुबके पड़े रहते हैं। न कोई तकाज़ा, न कोई डाँट-फटकार। किसी को किसी बात की चिंता नहीं।

हर समय ऐसा लगता है जैसे सारा घर थोड़ी देर के लिए बैठकर सुस्ता रहा है। मोटू-खोटू दोनों बाहर हैं। इसलिए कोई खटपट नहीं। समय का पता नहीं, इसलिए पापा को दफ़्तर की देर का डर नहीं। न नाश्ता बनाने की जल्दी, न लंच-बॉक्स तैयार करने की जल्दी। पापा को भी कोई डर नहीं था कि देर हुई तो साहब बिगड़ेंगे। शहर के अन्य सारे बाबू लोग भी दफ़्तर की देर के डर से छुटकारा पा चुके थे। शहर शांत था। बसों का इंतज़ार करनेवालों की कतारें छोटी हो गई थीं। भगदड़ गायब थी।

सभी दफ़्तरों, कारखानों, छोटी फ़ैक्ट्रियों आदि का समय चौंक ठहर गया था, इसलिए कर्मचारियों पर किसी तरह की पाबंदी नहीं रही थी। मज़दूरों के कार्ड पंच करनेवाली टाइम-मशीनें बंद पड़ी थीं। हज़ारों मज़दूरों के कार्ड हाथ से भरने के लिए हाज़िरी बाबू भी टाइम पर नहीं पहुँच पाते थे। मिल-मालिक परेशान थे। इस बार कुछ ऐसे फँसे थे कि यह भी नहीं कह सकते थे— 'बड़ा खराब टाइम आ गया है।' और न लंबी साँस लेकर कह सकते थे— 'समय बड़ा बलवान।' जब समय ही गायब था, तो दोष किसे देते!

समय यूँ गायब हुआ, तो शहर में सहसा समता का राज आ गया था। सच्चा समाजवाद आ गया था। छोटे-बड़े सभी लोग अपने दिनमान की डोर से कट गए थे। भाग्यवाद के फंदे से बच गए थे। बड़े-बड़े भाग्यवादी हेकड़ी भूल गए थे। भविष्य बेचनेवालों का कारोबार ठप था। दिनमानी दुकानें बंद थीं। मीन-मेख का अंतर भी मिट गया था।

समय ठहर गया था। भविष्य की चिंता से लोग दूर थे। घटनाएँ कम हो गई थीं। खबरनवीसों की मुश्किल हो गई थी। न तो खबरें मिलती थीं और न ही किसी की खबर लेने का मौका। नतीजा यह था कि अखबार छोटे हो गए थे। कागज़ की खपत कम हो गई थी। तंगी मिट गई थी। लेकिन कागज़ की मिलवाले चिंता में डूब गए थे। साथ ही जंगलात काटनेवाले ठेकेदार और मज़दूर भी। सबको कारोबार की चिंता थी।

उधर समय के यूँ गायब हो जाने से अफ़सरों, मैनेजरों व मिल-मालिकों की हालत अजीब हो गई थी। एक बड़ी कंपनी के मैनेजर साहब को घड़ी के अलार्म से उठने की आदत थी। घड़ियाँ सब ठहरी खड़ी थीं। इसलिए बेचारों की नींद भी जाने कब टूटती थी—कोई पता ही नहीं था। दूसरे कई बड़े अफ़सर जो सिर्फ़ अपनी टाइम की पाबंदी के कारण तरक्की पाते रहे हैं, वे भी अब भन्नाए फिरते हैं। होंठ काटते हैं, मुट्ठियाँ बंद करते हैं, दाँत पीसते हैं, लेकिन घड़ियाँ बंद की बंद खड़ी हैं। साहब की टाइम की पाबंदी का रौबदाब उतर चुका है। उनको भी होश-हवास नहीं है कि दफ़्तर के 'अपॉइंटमेंट' क्या हैं-कहाँ हैं!

जब से समय यूँ नदारद हुआ है – सरकार उदार हो गई है। अफ़सर उदार हो गए हैं। सबको एक-दूसरे की तकलीफ़ का थोड़ा ख़याल आया है। इसीलिए सभी मालिकों, अफ़सरों और सरकार की उदार सलाह से बाकी सारी हड़तालें समाप्त हो गई हैं।

घड़ियों की हड़ताल मगर अटूट है। सारी घड़ियाँ ठहरी खड़ी हैं। सरकार को समझ नहीं आ रहा है कि समय की एकता का राज़ क्या है? घड़ियों की यूनियन कहाँ है? सरकार के कड़े आदेशों के कारण सरकारी गुप्तचर विभाग पूरी छानबीन के साथ पता लगा रहा है कि घड़ियों की यूनियन का दफ़्तर कहाँ है। घड़ियों की यूनियन का नेता कौन है? बहुत छानबीन के बाद सरकार का गुप्तचर विभाग रपट पेश करता है। रपट में लिखा है–

> 'सभी ज्ञात सूत्रों की छानबीन के बाद भी हम समय की एकता का राज़ नहीं जान सके हैं। अपनी सारी खोजबीन के बाद हम इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि घड़ियों की यूनियन अभी तक कभी नहीं बनी है। हमें मालूम हुआ है कि घड़ियों की यूनियन का दफ़्तर अभी तक देश के किसी कोने में नहीं खुला है। हमारे विभाग के सभी बड़े अफ़सर समय की ऐसी अटूट एकता का रहस्य नहीं समझ पा रहे हैं।'

गुप्तचर विभाग की इस रपट के बाद गृह मंत्रालय की परेशानी और भी बढ़ गई थी। सरकार लगातार बंद पड़ी घड़ियों को चालू करने की अटकल सोच रही थी। पीछे छूटे समय को लौटा लाने का तरीका खोज रही थी। रात-दिन खोज रही थी।

अध्याय 2

खोजबीन जारी थी। समय गायब था। सभी परेशान थे। मगर समय की खोजबीन में इस बार सभी जुट गए थे। पंडित लोग, प्रोफ़ेसर लोग, वैज्ञानिक लोग, दिनमानी दुकानों के ज्योतिषी लोग और सौदा-सूत करनेवाले सभी व्यापारी लोग भी। इस प्रकार सरकार अब अकेली नहीं रह गई थी। जनता का साथ मिला, तो कई अच्छे सुझाव भी सामने आए। एक सुझाव 'घड़ीसाज़ों की कमेटी' का था।

सुझाव था कि—'सारे देश के घड़ीसाज़ों की एक राष्ट्रीय कमेटी बनाई जाए। इसी कमेटी को घड़ियों की हड़ताल का कारण तलाशने का काम सौंपा जाए।' सुझाव सभी मंत्रियों व अफ़सरों को अच्छा लगा था। सबने अपनी सहमति दे दी थी। सारे देश के नामी घड़ीसाज़ों के नाम आदेश जारी कर दिया गया था—'तुरंत राजधानी पहुँचो।'

सरकारी हुक्म पाते ही सभी नामी घड़ीसाज़ दिल्ली दौड़े आए। कुछ घड़ीसाज़ घबरा गए थे कि सरकार ने क्यों बुलाया! उनसे क्या कसूर हो गया? कुछ घड़ीसाज़ यह सोचते आए कि सरकार उनकी कारीगरी का कोई इनाम देना चाहती है। एक घड़ीसाज़ तो यह सोचते आए थे कि राष्ट्रपति भवन की किसी विलायती घड़ी को सुधारने का काम उनको सौंपा जाएगा। लेकिन इतना सभी घड़ीसाज़ जानते थे कि जैसे उनकी घड़ियाँ बंद हो गई हैं, वैसे ही दिल्ली के साहब लोगों की घड़ियाँ भी बंद हो गई होंगी – शायद तभी सरकार ने उन्हें याद किया है। सरकारी हुक्म का डर फिर भी सबके मन में बैठा हुआ था। सभी निश्चित तारीख पर सरकारी दफ़्तर में हाज़िर हुए।

सगतपुर के राजमहल का बूढ़ा घड़ीसाज़ राजधानी पहुँचा था। खैरागढ़ के नवाब का खास घड़ीसाज़ भी आया था। बजबज, बीकानेर, बनारस, बैंगलुरु, कानपुर, काठियावाड़, लेह-लद्दाख, नागपुर तथा नाथद्वारा के नामी घड़ीसाज़ भी आ पहुँचे थे। उनकी एक राष्ट्रीय कमेटी बना दी गई। इन घड़ीसाज़ों के दिल्ली पहुँचने से मालूम हुआ था कि घड़ियों की हड़ताल देश के कोने-कोने में फैल चुकी थी। इसके साथ ही एक अच्छी खबर यह भी थी कि जब से घड़ियों ने हड़ताल की है तब से दूसरी सारी हड़तालें टूट चली हैं। सरकार खुश थी, मगर चिंतित थी कि घड़ियों की हड़ताल को कैसे तोड़े! इनकी यूनियन को कैसे फोड़े? समय की एकता को तोड़ने की अटकल हर अफ़सर सोच रहा था।

घड़ीसाज़ों की राष्ट्रीय समिति बन चुकी थी। सरकार का प्रतिनिधित्व घड़ियों के सरकारी कारखाने नेशनल मशीन टूल्स (एन.एम.टी.) के बड़े इंजीनियर कर रहे थे। समिति की सारी बैठकों के प्रबंध हो चुके थे। घड़ीसाज़ों से कहा गया था कि 'वे घड़ियों की हड़ताल का कारण तलाशें। अपने-अपने घरों में सुधरने आई मरीज़ घड़ियों के बीच कभी किसी ने कोई कानाफूसी सुनी हो, तो बताएँ।' सभी घड़ीसाज़ों से यह भी कहा गया कि 'वे किसी भी तरह पीछे छूट गए समय को लौटा लाने में सरकार की भरपूर मदद करें।' सबसे अलग-अलग बयान माँगे गए थे।

सगतपुर से आए बूढ़े घड़ीसाज ने दु:खी होते हुए अपने राजमहल की रुकी हुई घड़ियों की व्यथा सुनानी शुरू की। सगतपुर के इस राजमहल में तीन सौ तैंतीस कमरे हैं, चालीस चौक हैं और चार ऊँचे लंबे घंटाघर हैं। इन चारों घंटाघरों में चार विलायती घड़ियाँ लगी हुई हैं। वे पिछले पचास साल से हर मौसम को सहती हुई ज्यों की त्यों डटी हैं। सही समय के घंटे बजाकर सारे शहर को समय की सूचना देती रही हैं। महल के हर कमरे और हर चौक में एक घड़ी टँगी है। महल में रहनेवाले और काम करनेवाले हर आदमी के हाथ पर एक-एक घड़ी बँधी है। इस प्रकार सगतपुर के राजमहल में एक हज़ार एक सौ एक घड़ियाँ हैं, जिनकी देखरेख यह बूढ़ा घड़ीसाज पिछले चालीस साल से कर रहा है।

सगतपुर के इस बूढ़े घड़ीसाज के बाल पक गए हैं, सारे दाँत गिर गए हैं। जब से दाँत गिरे हैं, यह घड़ीसाज सिर्फ़ यह सोचता रहता है कि कभी दिल्ली जाएगा और नए दाँत लगवा लाएगा, लेकिन वह सिर्फ़ सोचता रहा है। इसलिए मुँह अब भी पोपला है। जिस आँख पर वह काँच पहनता है, वह आँख अंदर गड़ गई है। गालों में गड्ढे पड़े हैं और चेहरे की चमड़ी झुर्रियों के कारण लटक गई है, लेकिन आज भी हरेक घड़ी की धड़कन से इसका रिश्ता-नाता जुड़ा है। वह पूरी आत्मीयता के साथ सारी घड़ियों को सँवारता है, साफ़ रखता है। जब से घड़ियाँ बंद हुई हैं, तब से वह बहुत दु:खी है। उसने एक-एक घड़ी का हर पुर्ज़ा, हर पेंच ठीक से ठोंककर परख लिया है। सभी कुछ सही है, फिर भी घड़ियाँ बंद हैं। कारण तो उसने किसी तरह ढूँढ़ ही लिया है। अपने बयान में वह कहता है—

"यह तो होना ही था सरकार! एक दिन तो इन घड़ियों को बंद होना ही था। जो इस टेम की इज्जत करते थे, वे तो रहे नहीं। तब फिर आखिर कभी तो उस टेम को भी चला ही जाना था।"

घड़ीसाज हाँफ़ता है। ठहरकर एक लंबी साँस लेता है और आगे बताता है, "साहब! इस महल के घंटाघर हर मौसम में घंटे बजा-बजाकर बताते रहे हैं कि 'तुम्हारा समय बीत रहा है' और यह राजमहल हमेशा चौकन्ना रहा है। प्रत्येक पल की इज्जत करता रहा है। सभी लोगों के

समय का खयाल रखता रहा है, उससे जुड़ा रहा है, लेकिन अब कौन जवाबदार रहा है सरकार? अब कौन जिम्मेदार रहा है? आज पल और पहर में कहीं कोई फ़र्क रहा है सरकार? आज जनता के दिनमान की किसे फ़िक्र है सरकार? अपनी ही जनता से दूर यह राजमहल एक भुतहामहल बनकर खड़ा है सरकार!"

कहते-कहते घड़ीसाज रो पड़ा था। उसके दिमाग में एक साथ बीते दिनों की याद कौंध गई थी और अब जो कुछ घट रहा है, उसे बरदाश्त करना उसके लिए मुश्किल हो गया था। उसके लिए यह बरदाश्त करना मुश्किल था कि शहर सगतपुर का समय चुपचाप हाथों से सरक जाए और किसी को इसका भान ही न रहे। न ही इस राजमहल की घड़ियों से यह अपमान सहा जा रहा था। बूढ़ा घड़ीसाज बता रहा था, "एक रात तो यह तमाशा भी देखना पड़ा कि सरकार, छोटे कुँवर साहब की कार कहीं से लौटी थी। तभी घड़ियों ने रात के दो बजाए। सारी घड़ियाँ एक साथ दो के घंटे बजा रही थीं। कुँवर साहब का नशा तोड़कर सुना रही थीं कि 'यह घर लौटने का समय नहीं है कुँवर साहब!' घड़ियों की चेतावनी कुँवर साहब को अच्छी नहीं लगी। उन्होंने दूसरे सवेरे ही सूरजपोल (मुख्यद्वार) की घड़ी उतरवा दी। सारी घड़ियों ने इसे अपनी तौहीन समझा था।"

घड़ीसाज फिर किसी पीड़ा के दबाव से दब गया था। थोड़ा ठहरकर कहने लगा था, "दूसरे ही सवेरे मैंने सुना कि मेरे कमरे की घड़ियाँ कानाफूसी कर रही हैं, एक-दूसरे से कह रही हैं कि 'अब हमारा समय बीत गया है, समय की इज्ज़त उठ गई है।' वे सारी घड़ियाँ अपनी कानाफूसी के बाद मुझे भी चेतावनी दे रही थीं। कह रही थीं– 'बूढ़े घड़ीसाज, तुम्हारा भी समय बीत गया है। अपने औजार समेट लो और बिस्तर बाँध लो।' मैंने कभी यह नहीं सोचा था कि कभी मेरी घड़ियाँ ही मुझसे यूँ किनारा करने को कहेंगी... किनारा करने को कहेंगी... कभी नहीं सोचा था सरकार! कभी नहीं...!"

कहता-कहता बूढ़ा घड़ीसाज बेहोश हो गया था।

घड़ीसाज़ का बयान सुन रहे सरकारी अफ़सर सन्न रह गए थे। बेहोश घड़ीसाज़ को तुरंत अस्पताल पहुँचाने के लिए सबसे बड़ा सरकारी अफ़सर खुद भागा था। उस घड़ीसाज़ की पीड़ा से सारे अफ़सर पिघल-से गए थे। वे अब घड़ियों के सवालों से जुड़ गए लगते थे, लेकिन कमेटी की कार्रवाई को आगे बढ़ाने के लिए एक अफ़सर ने बताया कि उसने सगतपुर के बूढ़े घड़ीसाज़ का बयान दर्ज कर लिया है। कमेटी के सभी अफ़सरों ने यह चाहा कि दर्ज हुआ बयान पढ़कर सबको सुनाया जाए। एक अफ़सर सरकारी रिकॉर्ड से बयान पढ़कर सुना रहा था–

'सगतपुर में समय की इज्ज़त करनेवाले नहीं रहे। राजमहल के लोग अपनी ज़िम्मेदारी भूल गए हैं– ऐशोआराम में समय नष्ट करते हैं। राजमहल जनता के समय से, शहर की जनता के दुःख-सुख से बिल्कुल कट गया है। सारे शहर का समय इसके शासकों के हाथों से चुपचाप सरकता जा रहा है और किसी को कोई परवाह नहीं है। इसलिए उस राजमहल की घड़ियाँ अब चलना ज़रूरी

नहीं समझतीं। वे सोचती हैं कि समय बताते रहने की अब कोई सार्थकता नहीं है। इस स्थिति को घड़ियाँ अपना अपमान समझती हैं और वे बंद हो गई हैं।'

सरकारी अफ़सर जब बयान पढ़कर सुना रहा था, तब सभी अफ़सर गर्दन हिला-हिलाकर घड़ियों की राय से अपनी सहमति जता रहे थे। वे सोच रहे थे, रूठी घड़ियों को कैसे मनाया जाए? ज़िम्मेदार लोगों को जनता के दु:ख-सुख के साथ कैसे जोड़ा जाए?

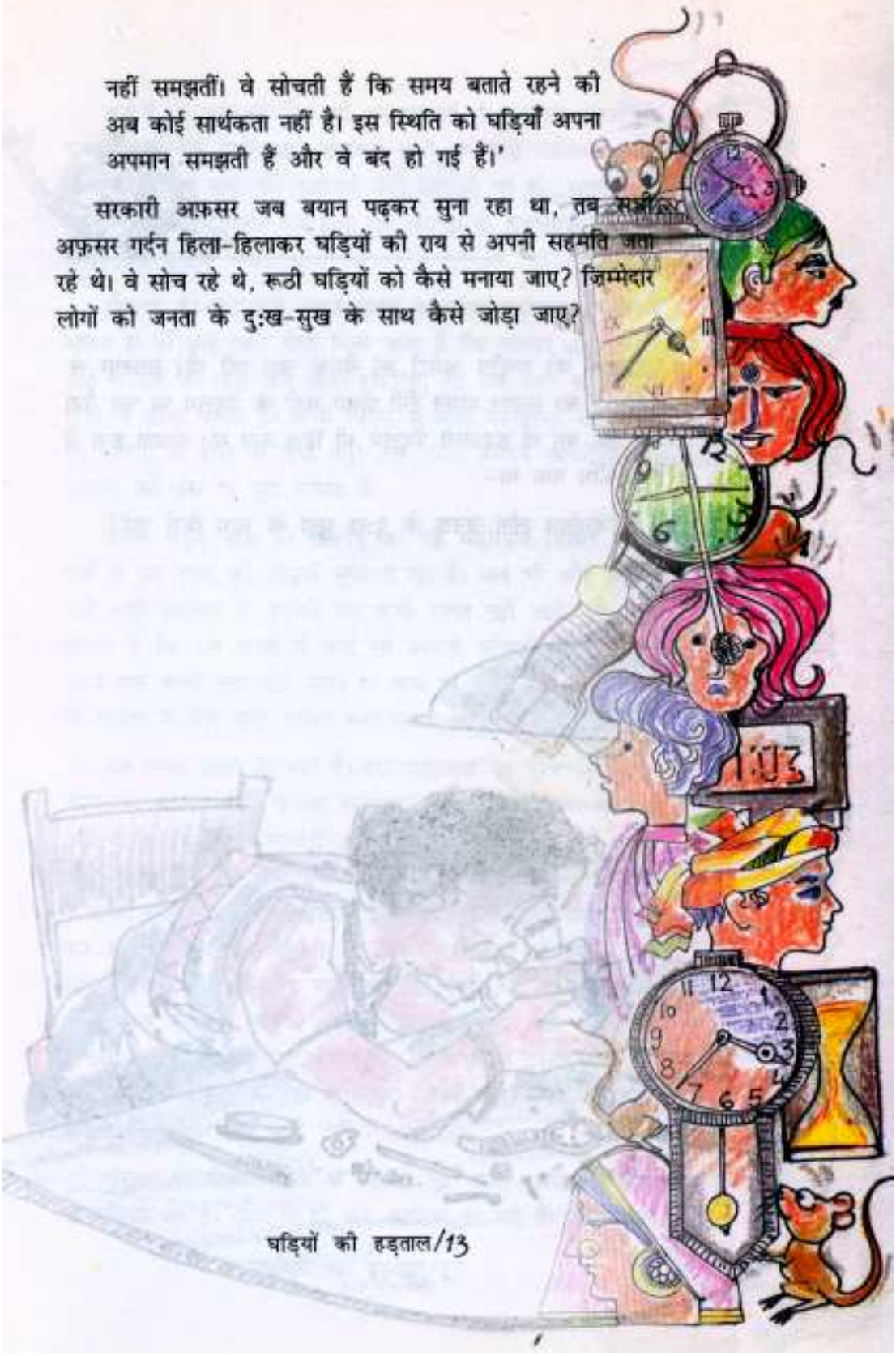

अध्याय 3

घड़ीसाजों की राष्ट्रीय कमेटी की बैठक चल रही थी। सगतपुर के घड़ीसाज़ का सवाल सामने टँगी दीवार घड़ी के पेंडुलम पर चढ़ बैठा था। एक बार तो हड़ताली पेंडुलम भी हिल उठा था। सवाल हवा में फिर कौंध गया था–

'ज़िम्मेदार लोग जनता के दु:ख-सुख के साथ कैसे जुड़ें?'

कमेटी के सरकारी मेंबर भी इन सवालों से जुड़ गए लगते थे। सबके चेहरों पर खिसियाहट छलकने लगी थी। इसी खिसियाहट को छिपाने के लिए सभा की कार्रवाई आगे बढ़ा दी गई थी। सगतपुर के बूढ़े घड़ीसाज़ का बयान दर्ज हुआ, तो खैरागढ़ के घड़ीसाज़ की बारी आई। उसे बुलाया गया।

खैरागढ़ का घड़ीसाज़ नवाब साहब का खास घड़ीसाज़ है। नवाब साहब से ही उसे इतना पैसा मिल जाता है कि उसका और उसके छोटे परिवार का खर्च चल जाए। इसीलिए वह सारे शहर की घड़ियाँ मुफ़्त में ठीक करता है। कभी किसी से कोई मेहनताना नहीं लेता। हर आदमी के हाथ पर बँधी घड़ी उसे अपना हमदम मानती है। हर आदमी को उस पर पूरा भरोसा है।

कारण बहुत साफ़ है। खैरागढ़ का यह घड़ीसाज़ पिछले पचास वर्षों से इस शहर की घड़ियाँ सुधारता रहा है। जब भी कोई आदमी नयी घड़ी खरीदता है, इसकी राय कभी गलत नहीं जाती और यही कारण है कि इस कस्बे में कोई भी आदमी घड़ियों के मामले में आज तक कभी ठगा नहीं गया। हर हाथ पर बँधी घड़ी, हर घर में या दफ़्तर में टँगी घड़ी हमेशा सही समय बताती है।

बात सिर्फ़ इतनी ही नहीं है। इस घड़ीसाज़ का पूरा परिवार इस काम को अपना पवित्र कर्तव्य समझकर करता रहा है। घर में पत्नी तथा दो बेटे हैं। सभी मेहनती और काम के जानकार। सबने अपना काम बाँट लिया है। सभी परोपकार और पूजा की भावना से काम करते हैं। उसकी बूढ़ी पत्नी खैरागढ़ की सभी मस्जिदों तथा धर्मशालाओं की घड़ियाँ सुधारती-सँवारती है। बूढ़े घड़ीसाज़ की बूढ़ी पत्नी मंदिर-मस्जिद में कोई भेद नहीं समझती। सभी धार्मिक स्थानों को यह समान रूप से पवित्र समझती है। वह समय को धर्मनिरपेक्ष मानती है। अपनी बात का सीधा और सरल प्रमाण उसके पास यह है कि मंदिर-मस्जिद में टँगी दो अलग-अलग घड़ियाँ एक ही समय बताती हैं, कभी कोई फ़र्क नहीं दिखातीं।

खैरागढ़ के घड़ीसाज़ के दो बेटे भी यही काम उससे बचपन से ही सीखते रहे हैं। अब वे भी बड़े आलिम हो गए हैं। अपने हुनर

के मास्टर हो गए हैं। अब खैरागढ़ के सभी स्कूलों, कॉलेजों, अस्पतालों, डाकखानों तथा दूसरे सभी सार्वजनिक स्थानों में टँगी घड़ियों की देखरेख का ज़िम्मा इनका है। अपने पिता की तरह ये भी पूरे उस्ताद हैं। इस पूरे परिवार की ज़बरदस्त देखरेख के कारण खैरागढ़ की सभी घड़ियों की सेहत हमेशा अच्छी रहती है। कभी कोई घड़ी खराब होने की हिम्मत नहीं करती। हालत यह है कि जब किसी घड़ी को सुधारे, साफ़ किए बहुत दिन हो जाते हैं, तो घड़ीसाज़ स्वयं जाकर उसे माँग लाता है तथा सफ़ाई आदि करके वापस दे आता है। कमाल की याददाश्त है इस बूढ़े घड़ीसाज़ की!

लेकिन जब से घड़ियाँ रुकी हैं, उसका दिमाग चक्कर खा गया है। वह सोच नहीं पाता कि जिस शहर में घड़ियों की सेहत का इतना ध्यान रखा जाता हो, वहाँ की घड़ियाँ एक साथ यूँ कैसे रुक सकती हैं?

घड़ियाँ जब से रुकी हैं, तब से ही जैसे इस पूरे परिवार पर कोई आफ़त टूट पड़ी है। सारा परिवार एक-एक घड़ी का एक-एक पुर्ज़ा देखने-परखने में लगा रहा, मगर घड़ियों के बंद होने का कारण समझ में नहीं आया। घड़ीसाज़ों का यह पूरा परिवार भी नहीं जान सका कि सारी घड़ियाँ एक साथ क्यों रुकीं? सबकी समझ जैसे मात

खा गई है, लेकिन अब भी पूरा परिवार कारण की तलाश में जुटा हुआ है।

एक दिन उस घड़ीसाज़ के दोनों बेटे स्कूल से दौड़े आए तथा घड़ियों के बंद होने का कारण ढूँढ़ लाए। घड़ीसाज़ को ऐसी खुशी हुई, जैसे अंधे को आँखें मिली हों।

उससे जब सरकारी अफ़सर ने राजधानी में घड़ियों के बंद होने का कारण पूछा था, तो वह सहमा-सा बताने लगा था। उसे सरकारी पूछताछ वैसे भी अच्छी नहीं लगती थी। वह दबी ज़बान में कह रहा था, "मेरी और मेरे परिवार की सेवा में कभी कोई कसर नहीं आई सरकार! हम सब तो पूरी लगन से, मोहब्बत से घड़ियों की देखभाल करते रहे हैं।"

बीच में सरकारी अफ़सर ने कहा, "हम तुम्हारी गलती नहीं ढूँढ़ रहे हैं। हम तो समय की एकता का राज़ ढूँढ़ रहे हैं। हमें तो समझना है कि सारे देश की घड़ियों ने एक साथ चलना बंद क्यों किया? तुम्हें अगर समझ में आया हो, तो बताओ।" सरकारी अफ़सर ने कड़ककर पूछा था। घड़ीसाज़ बता रहा है, "कारण तो मैं खुद ढूँढ़ रहा था सरकार! मैं भी उतना ही हैरान था, लेकिन अब जो कारण मेरे दो छोटे-छोटे लड़कों ने अपनी छोटी बुद्धि से खोज निकाला है, वह सरकार की बड़ी समझ से बाहर की चीज़ है। न पूछें तो ही अच्छा है।"

सरकारी अफ़सर ने सामंती रौब से कहा, "तुम बताओ, तुम्हें सभी कुछ माफ़ है।" खैरागढ़ के अनुभवी घड़ीसाज़ को सरकारी अफ़सर का यह 'तुम-हम' अच्छा नहीं लगा, लेकिन वह करता भी क्या? वह बता रहा था—

"साहब! घड़ियाँ तो आदमी ने बनाई हैं। अपनी सुविधा के लिए बनाई हैं। आज ऑटोमैटिक घड़ियाँ भी चल पड़ी हैं और इलैक्ट्रॉनिक घड़ियाँ भी। लेकिन कोई ज़माना था, जब या तो धूप-घड़ियाँ थीं या रेत-घड़ियाँ। जो भी हो, आदमी को समय के अंदाज़ की ज़रूरत थी। सिर्फ़ अंदाज़ की ही नहीं सरकार! उसे समय की कीमत पहचानने

की जरूरत थी। उसको समय के सही उपयोग की जरूरत थी और उसने अपनी सुविधा के लिए घड़ियाँ बना लीं। घड़ियों का काम उसकी सुविधा के लिए उसे सहयोग देना था, लेकिन... लेकिन बात कुछ बिगड़ती जा रही है सरकार। मेरे दो छोटे लड़के बता रहे थे कि खैरागढ़ के सारे स्कूलों की घड़ियाँ पीछे रहा करती हैं। वे स्कूलों की घड़ियों पर हमेशा अपनी नज़र रखते रहे हैं। उन्होंने देखा है वे घड़ियाँ तभी पीछे रहती हैं, जब किसी बच्चे को सज़ा मिलती है। वे बताते हैं कि सभी स्कूलों में ज़रा भी देर से आनेवाले लड़कों की लाइन अलग लगा करती है। यह लेटलतीफ़ों की लाइन कहलाती है। जब तक प्रार्थना होती है, तब तक मास्टरों की आँखें इन लेटलतीफ़ों की खबर लेने को तकती रहती हैं। बच्चों को नफ़रत से देखती ये आँखें सिर्फ़ उस अवसर का इंतज़ार करती हैं, जो बच्चों को सज़ा देने के लिए होता है। प्रार्थना के बाद इन 'लेटलतीफ़ों' को जितने मिनट की देर हो, उतने मिनट क्लास से बाहर खड़ा किया जाता है। तब तक स्कूल की सभी घड़ियाँ रुकी रहती हैं। इसके अलावा भी जब-जब इन मासूम बच्चों को कोई भी सज़ा दी जाती है, तब-तब घड़ियाँ

ठिठककर रुक जाती हैं। आपको यह जानकर हैरत होगी कि यह सिलसिला एक अर्से से चलता रहा है, मगर अब लगता है कि यह सब घड़ियों की बरदाश्त करने की ताकत से बाहर की बात हो गई है। इसीलिए वे ठहर गई हैं। सज़ा और समय का मेल घड़ियों को मंज़ूर नहीं लगता। फिर सज़ा भी मासूम बच्चों को! घड़ियाँ इसे नहीं सह सकी हैं।''

खैरागढ़ का घड़ीसाज़ एक लंबी साँस लेकर रुक गया था। उसने पानी पीना चाहा था। उसे पान की भी तलब हो आई थी। सरकारी दफ़्तर का चपरासी दौड़कर पानी लाया था। दूसरा चपरासी पान लेने दौड़ा था। पानी पीकर खैरागढ़ के घड़ीसाज़ ने अपनी बात आगे बढ़ाई। वह कह रहा था–

''घड़ियाँ बच्चों पर यूँ सवार हो जाएँगी– ऐसा किसने सोचा था सरकार? बच्चे भी अगर फ़ौजी आदमी की तरह पाबंद हो जाएँगे, तो बच्चे क्यों कहलाएँगे? बच्चे केवल बच्चे ही बने रहें, इसके लिए तो उनको समय के इस आतंक से बचाना ही होगा सरकार! ऐसा भी किसने सोचा था कि समय बच्चों पर यूँ सवार हो जाएगा और सारी दुनिया की कच्ची पौध समय से इस तरह डरती रहेगी? यह बात तो सरकार आपके ध्यान में आनी चाहिए थी, लेकिन जब ऐसा होता ही न दीखा तो घड़ियों ने खुद ही फ़ैसला किया। घड़ियों ने अब सारे बच्चों की हँसी-खुशी के लिए न चलने का फ़ैसला किया है। वे तब तक नहीं चलेंगी, जब तक कि फ़ौजी कानून स्कूलों से नहीं हटा लिए जाएँगे, बच्चों पर समय को इस कदर क्रूरता से सवार नहीं होने दिया जाएगा। अब आप ही बताइए सरकार! ऐसी बात कैसे समझ में आएगी आप सबको? कैसे बदलेंगे आप अपना रुख?''

खैरागढ़ के घड़ीसाज़ का सवाल एक लंबी सिफ़ारिश के साथ एक बड़ी कमेटी में पूछे जाने के लिए भेज दिया गया था। उसका सारा बयान एक अफ़सर ने दर्ज किया था। उस बयान का मोटा मुद्दा उसने पढ़कर सुनाया था–

'खैरागढ़ के सभी स्कूलों में देर से आनेवाले बच्चों को सज़ा मिलती थी। देर एक मिनट हुई है या ज़्यादा, यह

कुछ नहीं देखा जाता था। खैरागढ़ की घड़ियाँ मानती हैं कि समय को बच्चों के सिर पर सवार नहीं होना चाहिए। घड़ियाँ यह भी मानती हैं कि जब तक बच्चों को ऐसी क्रूरता से बचा नहीं लिया जाता, तब तक समय का हिसाब रखना बेकार है। खैरागढ़ की घड़ियों ने फ़ैसला किया है कि जब तक बच्चों की मुस्कान नहीं लौटाई जाती, तब तक घड़ियाँ बंद रहेंगी।'

खैरागढ़ की घड़ियों का फ़ैसला सुनकर सभी सरकारी अफ़सर चकित थे। उन्होंने तुरंत शिक्षा मंत्रालय के नाम एक चिट्ठी भेजी कि घड़ियों के फ़ैसले पर विचार करने के लिए देश के नामी शिक्षाविदों को बुलाया जाए, एक कमेटी फिर बैठाई जाए और बच्चों पर समय की पाबंदी लागू करने की बात पर फिर से विचार किया जाए।

अध्याय 4

सरकारी दफ़्तर में घड़ीसाज़ों के बयान चल रहे थे। घड़ियों की हड़ताल का कारण समझनेवाली राष्ट्रीय कमेटी की मीटिंग दिन-ब-दिन आगे खिसकती जा रही थी। घड़ीसाज़ों के लंबे बयान नई-नई बातें उभार रहे थे। बयानों से सामने आई बातें चौंकाती थीं। सबके कान खड़े करती थीं। सरकारी अफ़सर सिर खुजाने लगे थे। अभी तक सामने आए बयानों से साफ़ था कि घड़ियों की यह हड़ताल किसी समझौते से नहीं टूटेगी।

सगतपुर और खैरागढ़ के घड़ीसाज़ों का बयान हो जाने के बाद एक ऊँचे सरकारी अफ़सर ने कहा था–"यह मामला काफ़ी बढ़ गया है। अब यह मामूली मामला नहीं रहा है।" तब तक दूसरा अफ़सर बोला था–"यह दरअसल बहुत बुनियादी सिद्धांतों का मामला बन गया है। जहाँ सिद्धांत आड़े आते हों, वहाँ ऊपरी उठापटक से कोई संगठन नहीं फोड़ा जा सकता। हम लोगों को अपनी नीति में कोई बुनियादी फेरबदल करना होगा। तभी समय की ऐसी एकता का रहस्य हम समझ सकेंगे।" यह सुनकर तीसरा अफ़सर पूछने लगा था–"मुझे तो यही समझ में नहीं आता कि घड़ी के दिमाग में ऐसा कौन-सा पुर्ज़ा होता है, जो इस तरह आदमी के दिमाग की तरह सोच-समझ सकता है!"

"घड़ियों के दिमाग का ही अगर पता लग जाए, तो फिर समस्या ही क्या है–उसे ही निकलवा फेंकेंगे।" एक अफ़सर का कहना था। "लेकिन उस दिमाग का पता लगा लेने के लिए भी तो दिमाग की ज़रूरत है! वह कहाँ से लाएँगे आप?" सबसे बड़े अफ़सर ने पूछा था। बड़े साहब के सवाल ने सबको चुप कर दिया था। सेक्रेटरी ने

सवाल किया था– "साब! तीसरा नंबर बजबज के घड़ीसाज़ का है, उसे बुलाऊँ क्या?"

हुक्म होते ही बजबज का घड़ीसाज़ अंदर आ पहुँचा था। बजबज कलकत्ता के पास ही एक छोटा शहर है। लेकिन वहाँ से आया यह बंगाली बाबू बंगाल की रग-रग को जानता है। उसने बंगाल में चल रहे सेठों के कई कारोबारों में काम किया है। वह चकित है कि सेठों के इन दफ़्तरों का हर अफ़सर कसकर काम लेने और कम-से-कम पैसा देने में उस्ताद है।

बजबज का यह बंगाली बाबू भी ऐसे ही एक दफ़्तर में काम करता है। इसके दफ़्तर में एक बाबू खास ड्यूटी पर बैठता है। यह बाबू सीधे बड़े साब का आदमी है। ज़रूरी काम यानी खास ड्यूटी के नाम पर इतना-सा काम कि एक रंगीन डायरी में रोज़ हर आदमी

के दफ़्तर पहुँचने का सही समय दर्ज किया करे। बजबज के सारे दफ़्तरों में ऐसे काम के लिए कुछ खास आदमी तैनात हैं। साहब लोगों के ये मुस्तैद सिपाही अपनी ड्यूटी लगन से पूरी करते हैं, साहब लोगों की खुशी के वास्ते।

बजबज से आया यह बंगाली बाबू पेशे से बाबू है, मगर हुनर से घड़ीसाज़। काम का पूरा कारीगर है, मगर इसने कसम खा रखी है कि हाथ के हुनर को कभी बेचेगा नहीं। वह गरीब घर में जन्मा-पला है और अपने परिवार की सारी पीड़ाओं के लिए सेठों व सूदखोरों को दोषी मानता है। इसलिए उसने यह भी कसम खा रखी है कि कभी किसी सेठ या सूदखोर की घड़ी नहीं सुधारेगा। वह सिर्फ़ मजदूरों की और अपने साथ के लोगों की घड़ियाँ सुधारता है, मुफ़्त में सुधारता है। घड़ियों की हड़ताल का कारण खोजता हुआ वह कई बातें सोचता रहा है। अपना बयान शुरू करते हुए वह कहता है, "यह मामला मशीनरी नहीं है। यह एक पॉलिटीकल मामला बन गया है साब! बंगाली साहब लोगों के लिए किसी की घड़ी कोई मतलब नहीं रखती। वे सबकी घड़ियों के ऊपर एक सिपाही बैठाते हैं। एक अफ़सर अपॉइंट करते हैं। घड़ियों पर अफ़सरी का मामला बहुत सीरियस है साब!"

बंगाली बाबू ऐसी चेतावनी के साथ ही सारा हाल कह सुनाता है। वह बंगाल के दफ़्तरों के बाबू लोगों की हालत बयान करता है। साफ़ दिखाता है कि मामूली आदमी का समय कितना सस्ता है और साहब का समय कितना महँगा। वह यह भी शिकायत करता है कि जब एक मामूली कर्मचारी काम के बोझ से दबा रात काली करता रहता है, तब उसका साब उसी समय ऐश में डूबा होता है। वह काम में हाथ बँटाना तक ठीक नहीं समझता। बयान दर्ज हो जाने पर बंगाली बाबू की बात के भी असली मुद्दे पढ़कर सुनाए जाते हैं। बयान में लिखा गया है–

> 'पूरे बंगाल में व्यापारी दफ़्तरों के अफ़सर अपने भरोसे के लिए टाइमकीपिंग बाबू रखते हैं। यह बाबू साहब की घड़ी के हिसाब से और कुछ अपने मनमाने तरीके से

लोगों के आने का व जाने का समय दर्ज करता है। फिर इसी हिसाब से लोगों की तनख्वाह बनती हैं। घड़ियाँ इसे अपने प्रति अविश्वास मानती हैं। वे यह भी मानती हैं कि समय इतना सस्ता नहीं होता है कि उसे आदमी के खिलाफ़ खड़ा कर दिया जाए। घड़ियों का कहना है कि घड़ियाँ आदमी को चलाने के लिए नहीं चलती हैं। घड़ियाँ इसे अपना अपमान समझती हैं कि समय की बात को आदमी की पीड़ा और परेशानी से ज्यादा महत्त्व दिया जाता है। बंगाल की घड़ियों ने एक राय से यह तय किया है कि जब तक समय को आदमी के खिलाफ़ इस्तेमाल किया जाता रहेगा, तब तक घड़ियाँ बंद रहेंगी।'

बजबज के बंगाली बाबू का यह बयान एक विशेष हरकारे के साथ बंगाल के मुख्यमंत्री को भेज दिया गया। साथ में यह सुझाव भी कि तुरंत स्थिति की जाँच जरूरी है।

घड़ियों की हड़ताल का कारण पता करनेवाली कमेटी की कार्रवाई चल रही थी। घड़ीसाजों के बयान दर्ज हो रहे थे। समय बीतता जा रहा था, परंतु कोई नहीं जानता था कि कितना बीता। लोग सिर्फ़ दिन गिनते थे। सूर्य के उदय होने और अस्त होने का इंतज़ार करते थे। ऐसा लगता था कि लोग घंटों की पहचान को भूलकर

सिर्फ़ दिन व रात की पहचान से जुड़ गए हैं। दिन-रात की यह पहचान शहरी सेठों व अफ़सरों के लिए नयी पहचान थी, जिन्हें पहले कभी दिन-रात की परवाह भी नहीं रहती थी वे अब सूर्योदय की प्रतीक्षा करने लगे थे। सूरज से लोगों का रिश्ता एक नयी उम्मीद बँधाता था, लेकिन लगता था कि घड़ियाँ अभी भी निराश हैं। अभी भी उदास हैं। घड़ियों की हड़ताल अभी भी जारी थी।

इस लंबी हड़ताल में मौज मनानेवाले छोटू-मोटू और खोदू की मंडली अब करवट बदलने लगी थी। सबकी सेहत सुधरने लगी थी। सबके चेहरे चमकने लगे थे। सबकी आदतें बदलने लगी थीं। बच्चों की बदली आदतों ने बच्चों के माँ-बाप को भी सोचने पर विवश कर दिया था। वे बच्चों की आज़ादी के अर्थ समझने लगे थे। उन्हें समझ में आ गया था कि आरोपित पाबंदी बुरी होती है, लेकिन उन्होंने देखा था कि बच्चे खुद अब अपने खेल तथा काम के समय को बाँटने लगे हैं। उसका पूरा उपयोग करने लगे हैं। यह बदलाव माँ-बाप को अच्छा लगा था। आदतों में ऐसा सुधार आने के साथ ही छोटू-मोटू की सारी मंडली कुछ नए सवालों पर सोचने लगी थी। ये सवाल थे— समय बड़ा या कागज़? समय बड़ा या आदमी? समय आदमी के वास्ते या आदमी समय के वास्ते? ये सारे सवाल समय को आदमी के खिलाफ़ खड़ा करने से जुड़े थे। बच्चे जैसे बड़े हो गए थे।

ऐसे सवालों पर छोटी-छोटी बहसें इस मंडली में शुरू हो गई थीं। सभी बच्चों के पिता अब प्रसन्न थे। उनको लगने लगा था कि बच्चे अब सोचने-विचारने लगे हैं। माता-पिताओं और तमाम अभिभावकों ने अब जाकर महसूस किया था कि असली शिक्षा कब और कहाँ शुरू होती है।

अध्याय 5

बच्चों ने महसूस किया था कि वे आज़ाद हो गए हैं। मगर आज़ादी अपने साथ अराजकता नहीं लाई थी। उसने हर बच्चे का हौसला बढ़ाया था। विश्वास बढ़ाया था। छोटू-मोटू के सभी दोस्त पहले से ज़्यादा जिम्मेदार हो गए थे, लेकिन यह जिम्मेदारी वही थी, जिसे उन्होंने खुद चुना था। इस बार उन्होंने तय किया था कि वे रोज़ सवेरे घूमने जाएँगे तथा हर सवेरे सूर्योदय देखेंगे। उनका यह फ़ैसला इस बार लोहे की लकीर हो गया था और हर दोस्त में होड़ लग गई थी कि पहले कौन जगे व किसको कौन जगाए! इस होड़ ने न केवल जगने की बात सिखाई थी, बल्कि जगाने की बात भी सिखाई थी।

एक सवेरे खोटू भी जल्दी जगा था। उसे आज जगना बहुत अच्छा लगा था। आज पहली बार उसने सूर्योदय देखा था। उसे सूरज की पहली किरण ने एक नयी बात बताई थी। अँधेरे को चीरने की बात। आज उसने अपनी आँखों से देखा था कि सूरज की पहली

किरण धरती से अंधकार की चादर अपने हाथों उघाड़ती है। पहली किरण रातभर से सोए शहर में एक नयी हलचल पैदा करती है। लोग गुदड़ी छोड़कर सड़क पर निकल आते हैं। धंधे पर चल देते हैं। कोई ठेला लेकर निकल पड़ता है, तो कोई पूजा के फूल लेकर मंदिर चल देता है। आज सवेरे पहली बार खोटू ने भी पूजा तथा काम के इस निकट संबंध को देखा था। रिक्शेवाले के लिए रोजी पूजा थी, यह उसने अपनी आँख से देखा था। उसे समझ में आया था कि जगना पाना है तथा सोना गँवाना है।

खोटू ने आज सवेरे केवल जगने के अर्थ ही नहीं समझे थे। उसे जगाने का सुख भी मिला था। वह आज पहली बार अपने एक दोस्त को जगाने पहुँचा था। उसे जगाकर दोनों साथ घूमने निकले थे। दोनों ने सवेरे की हलचल को पहली बार देखा। दोनों ही सूरज की पहली किरण से प्रभावित थे। खोटू ने जगाने के इस सुख को अपना सुख माना था। वह जगने तथा जगाने में विश्वास करने लगा था। उगते सूरज के साथ उनका यह रिश्ता उसे अच्छा लगने लगा था। उसे लगने लगा था कि बच्चों को उगता सूरज बनना होगा। खोटू के दूसरे दोस्त भी अब सूर्योदय से पहले घूमने की मंडली में शरीक होने लगे थे। घूमने के साथ-साथ उपयोगी बातों पर सोचने-विचारने लगे थे। इससे भी आगे का आश्चर्य यह था कि सोच-विचार केवल हवा में नहीं होता था, बाकायदा रोज की पढ़ी किताबों या खबरों पर होता था। सोच-विचार की यह बात जिम्मेदारी की बात थी। आगे बढ़ने की बात थी। अपनी जानकारी बढ़ाने की बात थी। अपनी खुशियाँ बढ़ाने व बाँटने की बात थी, लेकिन यह सुख उनका अपना सुख था। उन्होंने इसे चुना था और पाया था। बच्चों को लगने लगा था कि उनकी बुद्धि अब बड़ी हो रही है और वे अब कुछ रच सकते हैं। इससे एक विश्वास जगा था।

बच्चों के इस विश्वास ने माँ-बाप को भी नया विश्वास दिया था। छोटू के पिता समझ गए थे कि हड़बड़ी बुरी होती है। शांति और धीरज की बात बड़ी होती है। वे अब समझ गए थे कि बच्चों की दुनिया एक अलग दुनिया है। लेकिन बच्चों की दुनिया से घड़ियों को

दुनिया का ऐसा निकट संबंध उनके लिए एक नयी खबर थी। जब से घड़ीसाजों के बयान अखबारों में छपने लगे हैं, तबसे सभी परिवारों की घड़ियों की बातों में दिलचस्पी बढ़ गई है। घड़ियों की हड़ताल का रोज नया कारण! वे हैरान तो हैं, लेकिन जब से घड़ियों की बात बच्चों से जुड़ी है, तब से इस मसले को लोगों ने एक पारिवारिक मसला मान लिया है। हर घर-परिवार अब घड़ियों की समझ और संवेदना की दाद देने लगा है। हर घर अब दूसरे सवेरे के अखबार का इंतज़ार करने लगा था– घड़ियों की हड़ताल का अगला कारण जानने के लिए।

इधर इंतज़ार हो रहा था, उधर बयान चल रहे थे। सारे घड़ीसाज अपने-अपने बयान देने की बारी का इंतज़ार करते थे और अपना नंबर आने पर अपनी पोटली से अच्छा-सा कारण निकालकर परोस देते थे। ऐसा लगता था कि जैसे हर घड़ीसाज के पास कोई नया रहस्य है। इसी रहस्य को जानने के लिए ही समय-भवन के बाहर पत्रकारों की भीड़ सरकारी विज्ञप्ति की प्रतीक्षा करती रहती थी। घड़ीसाजों के बयान की सुनवाई बंद कमरे में ही हो रही थी। सरकार को खतरा था कि समय की एकता का रहस्य कोई दूसरा न जान ले।

समय की एकता का यह रहस्य सरकार के लिए बहुत बड़ा रहस्य बना हुआ था, लेकिन अब तक हुए बयानों ने सरकार को बहुत निराश किया था। ऐसा कोई कारण अभी तक सामने नहीं आया था कि सरकार कोई सीधी कार्रवाई कर सके। न ही कोई ऐसा कारण सामने आ रहा था, जिसका कोई स्थायी इलाज सरकार के पास हो। नतीजतन कार्रवाई को जारी रखना ज़रूरी था। कार्रवाई चल रही थी। समय ठहरा खड़ा था। सरकारी नुमाइंदे सरकार की लाचारी पर तरस खा रहे थे।

अध्याय 6

सभी शहरों से आए घड़ीसाज़ राजधानी में टिके हुए थे। बयान समय-भवन में चल रहे थे। घड़ियों की हड़ताल खुलने के मगर कोई आसार नहीं दीखते थे। घड़ियों को बंद हुए चूँकि कई दिन हो गए थे, इसलिए राजधानी की हवा में एक खास तरह का तनाव छा गया था। सड़कों, चौराहों और बसों के चलने व रुकने का सारा नक्शा ही बदल गया था।

समय एक अर्से से नदारद था। इसलिए समय से लोगों को परिचित रखने के लिए नए तरीके निकाले जा चुके थे। सरकार के समय-सूचना विभाग की तरफ़ से समय बताने के लिए विशेष इंतज़ाम किए गए थे। यह समय-सूचना विभाग घड़ियों की हड़ताल की देन था। एक नया महकमा खुला था। सरकार को भी समय बड़ा बलवान लगा था और इस महकमे के लिए सारे स्रोत खोल दिए गए थे। महकमा पनपने लगा था। घड़ियों की हड़ताल ने कइयों के दिन फेरे थे। सरकारी महकमों में एक स्वभावगत होड़ व ईर्ष्या चलती रहती है। इसी ईर्ष्या ने समय-भवन के निर्माण की माँग रखी थी। माँग मान ली गई थी, क्योंकि महकमा महत्त्वपूर्ण था। अब दिल्ली में वायु-भवन, कृषि-भवन, उद्योग-भवन व रेल-भवन की कतार में समय-भवन भी खड़ा हो गया था।

जब से समय-भवन बना था, एक नयी राजनीतिक माँग भी बलवती हुई थी। राजनेताओं ने माँग की थी कि एक समय-मंत्री भी नियुक्त होना चाहिए। माँग वाजिब लगी थी, लेकिन समय-मंत्री केवल उसे बनाया जाना चाहिए था, जो समय की एकता का राज़ जानता हो, जो सही समय को पहचानता हो, जो खोए समय को लौटा

ला सकता हो, जनता को सही समय बाँट सकता हो तथा जो घड़ियों की हड़ताल तुड़वा सकता हो। इतना समर्थ मंत्री तो मिलना मुश्किल लग रहा था, लेकिन किसी तरह एक मंत्री चुन लिया गया था।

समय-मंत्री ने आते ही घोषणा की कि वे घड़ियों की हड़ताल को फ़ौरन तुड़वाएँगे तथा राष्ट्र के सही समय को लौटा लाने का जी-तोड़ प्रयास करेंगे। उन्होंने यह भी घोषणा की थी कि लोगों की विशेष सुविधा के लिए बिना राशन सही समय बाँटने के सभी इंतज़ाम कर दिए गए हैं। घोषणा सही थी। समय बाँटा जा रहा था।

हर सड़क पर लगभग एक-डेढ़ मील की दूरी पर तंबू तान दिए गए थे। तंबुओं में टेलीफ़ोन से समय की सूचना आती रहती थी और यहाँ बैठा बाबू पूरी उदारता के साथ समय बाँटता था—हर बार एक ही सवाल का जवाब देता था— 'बाबूजी! क्या बजा है?' समय की सूचना यहाँ समय विभाग से आती थी, और इस विभाग ने आकाशवाणी में कुछ ऐसा प्रबंध किया था कि बी.बी.सी. लंदन से समय की सूचना लगातार मिलती रहती थी। हड़ताल चूँकि देशव्यापी थी, इसलिए समूचे देश की सुविधा के लिए आकाशवाणी से हर एक घंटे बाद यह सुना जा सकता था— 'ये आकाशवाणी है। इस समय बी.बी.सी. के अनुसार रात के इतने बजे हैं। इसलिए भारतीय समय के अनुसार दिन के इतने बजे हैं।'

सरकारी समय-सूचना विभाग की इस व्यवस्था से लोगों को काफ़ी सुविधा हो गई थी। यह समय-सूचना विभाग बिल्कुल नया विभाग है। इसलिए अभी पूरी फुर्ती से काम करता है। इस विभाग

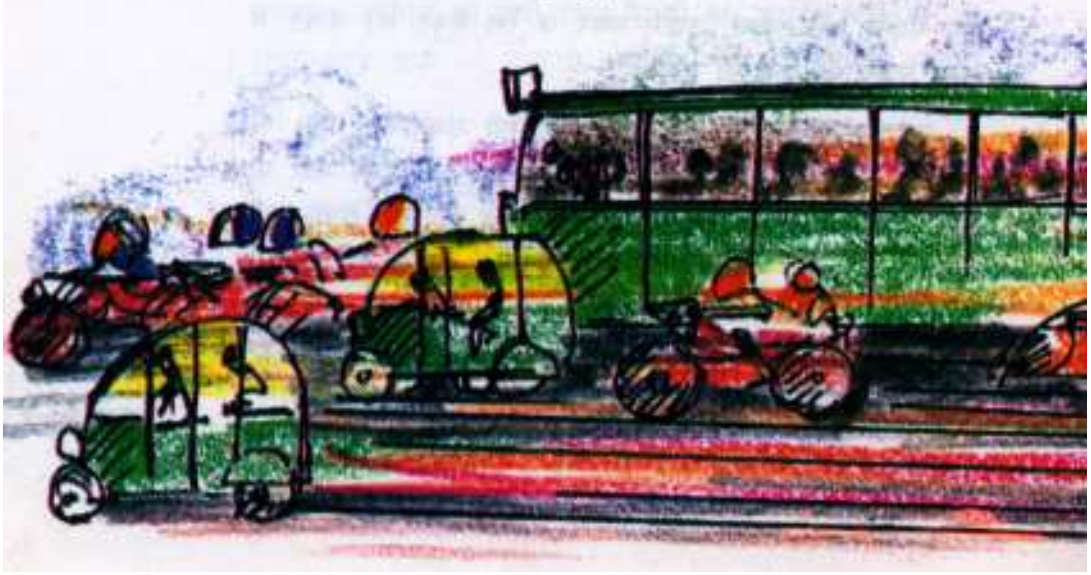

में इधर जितने नए लोग रखे गए हैं, वे सब घड़ियों की हड़ताल को मन ही मन धन्यवाद देते हैं। इस अवसर पर ही नौकरी लगे बाबू सोच रहे थे कि 'समय पर ध्यान रखना तो सरकार के लिए पहला काम हो गया है। इसलिए यह महकमा अब कभी बंद होने का नहीं।'

इधर इस तरह से समय की जानकारी मिलने पर बूढ़े-बुजुर्गों के दिमागों में ब्रिटिश राज की याद ताजा हो गई थी। उनको विदेशी चीजों की प्रशंसा करने का एक और तर्क मिल गया था। आकाशवाणी से समय की सूचना सुनकर एक बूढ़ा कारीगर कह रहा था, "अब आखिर तो टेम भी विलायत से मँगाना पड़ा याकि नहीं? अरे, हमने तो पहले ही कहा था कि जो टेम गोरों के साथ चला गया, वह जब तक वापस नहीं आता, तब तक गुजारा नहीं चलेगा।"

बूढ़ा कारीगर अपने तर्क को मजबूत करता हुआ आगे कह रहा था–"देखो बाबू! देशी और विदेशी टेम में भी रात-दिन का फ़र्क है।"

यह तो सीधे-सादे आदमी की बात थी। उधर जो लोग विदेशी चीजों के इस्तेमाल में अपनी शान समझते थे, उन्हें भी मजा आ गया था। वे कहते फिरते थे कि अब तो समय भी 'इंपोर्टेड' है। वे सोचने लगे थे कि अब 'इंडियन टाइम' नहीं रहा, इसलिए शायद हिंदुस्तानी कुछ ज्यादा 'पंक्चुअल' हो जाएँगे।

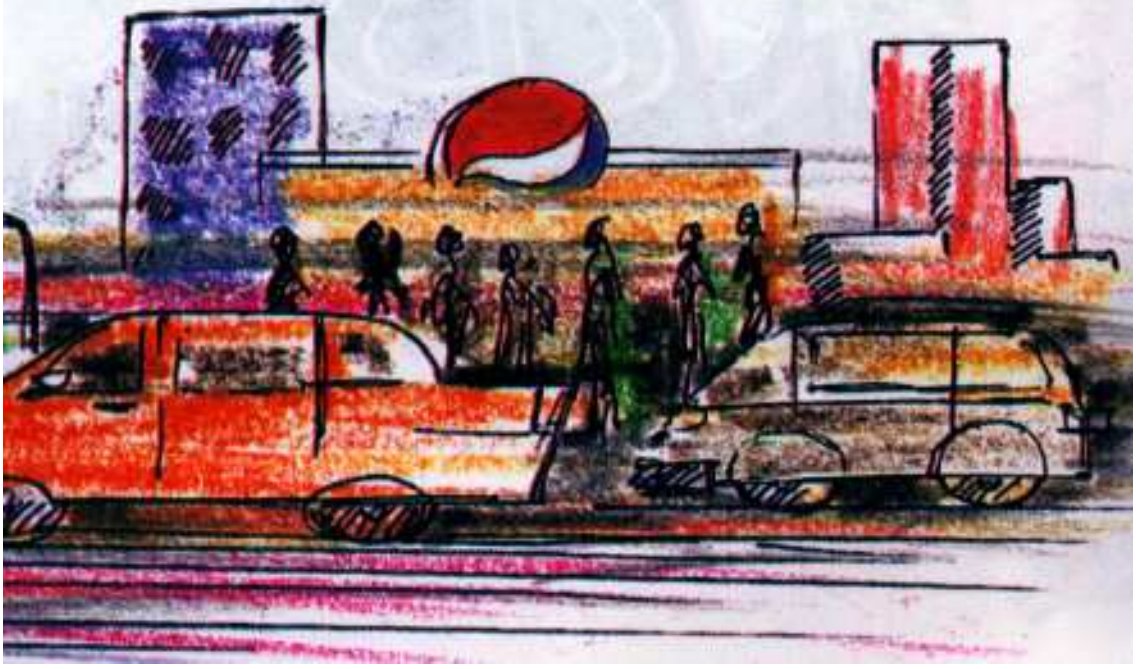

इधर समय जानने के लिए देशी तरीके भी ढूँढ़ निकाले गए थे। जंतर-मंतर की धूप-घड़ियों के मिटे अंकों को वापस उकेरा गया था। इसी धूप-घड़ी के हिसाब से दिल्ली के रीगल बस-स्टॉप की बसें चलने लगी थीं। मद्रास होटल के बस-स्टॉपवालों ने भी ऐसा ही प्रबंध किया था। लेडी हार्डिंग मेडिकल कॉलेज के हॉस्टल के दरवाज़े के ऊपर लगी धूप-घड़ी के समय से बसें चलने लगी थीं। जंतर-मंतर की धूप-घड़ी पर समय जाननेवालों का ताँता हर वक्त लगा रहता था। इधर लेडी हार्डिंग मेडिकल कॉलेज के हॉस्टल के सामने भी हर वक्त समय जाननेवालों की भीड़ लगी रहती थी। कुछ लोग फिर से अपनी घड़ियाँ मिलाते हुए भी देखे जा सकते थे, लेकिन घड़ियाँ लाख मिलाए भी नहीं मिलती थीं। चलने का नाम ही नहीं ले रही थीं। तंबुओं में बैठे बाबू दिनभर समय बाँट रहे थे।

धूप-घड़ी का चलन काफ़ी बढ़ गया था। कई लोगों ने अपनी छतों पर धूप-घड़ियाँ लगाई थीं। मगर इनसे उतना सही समय मालूम नहीं होता था, जितना कि जंतर-मंतर की धूप-घड़ी से। विज्ञान और तकनीकी मंत्रालय ने भी यह फ़ैसला किया था कि वैज्ञानिकों और

ज्योतिषियों की एक टीम जयपुर जाएगी। वह टीम पता लगाएगी कि महाराज जयसिंह हिंदुस्तान में और कहाँ-कहाँ जंतर-मंतर बनाना चाहते थे? धूप-घड़ियाँ खड़ी करने का उनका फार्मूला क्या था? मंत्रालय ने आदेश जारी कर दिए थे। टीम जयपुर को चल पड़ी थी।

केवल धूप-घड़ियों के दिन ही नहीं फिरे थे, इनके साथ-साथ रेत-घड़ियों के प्रचलन को भी प्रोत्साहन दिया गया था। अस्पतालों में हर पलंग के सिरहाने एक छोटी रेत-घड़ी फिट कर दी गई थी जो कि नब्ज देखने में नर्सों की मदद करती थी। स्कूलों का हर मास्टर अपनी कमर पर रेत-घड़ी लटकाए फिरता था। जब मास्टर जी क्लास में पहुँचते तो सामने रखी मेज़ पर रेत-घड़ी को औंधा कर देते थे। मास्टर जी को गिरती रेत दूर से ही दिख जाती थी। मेज़ पर रखी घड़ी की गिरती रेत पर सारे लड़कों की नज़रें टिकी रहती थीं। सबका ध्यान रेत पर रहता था, इस बात पर रहता था कि रेत के खत्म होते ही क्लास भी खत्म होनी है। मास्टर जी के लिए आराम हो गया था। उन्हें भी समय का पता स्वतः चलता रहता था। बार-बार हाथ उठाकर घड़ी नहीं देखनी पड़ती थी। यह इंतज़ार नहीं करना पड़ता था कि घंटी कब बजेगी, लेकिन कुछ मास्टर ऐसे भी थे, जो आदतन लाचार थे। हाथ पर घड़ी नहीं, फिर भी हाथ ऊँचा करके समय देखना चाहते थे। जैसे ही हाथ ऊँचा उठता था, क्लास एक ज़ोरदार ठहाके से गूँज उठती थी। मास्टर जी झेंप जाते थे। एक लंबी साँस छोड़कर कहते थे, "पता नहीं यह घड़ियों की हड़ताल भी कब खुलेगी!"

जब कभी कोई मास्टर जी ऐसी आह भरते थाकि अपनी रेत-घड़ी क्लास में लाना भूल जाते, तो छोटू-मोटू को फिर कोई नयी कारस्तानी सूझती। इधर जब से घड़ियाँ हड़ताल पर बैठी हैं, तब से कारस्तानियाँ कम हो गई हैं। मगर छोटू-मोटू के चेहरे पर एक नयी चमक आ गई है। शरीर में नयी फुरती आ गई है। घड़ियों के बंद होने के साथ ही उनकी खिंचाई भी बंद हो गई है। उनकी पूरी पलटन इधर-उधर फिरती है। स्कूल के सारे मास्टरों की कमर पर लटकी रेत-घड़ियाँ छोटू-मोटू को और भी मज़ा देती हैं।

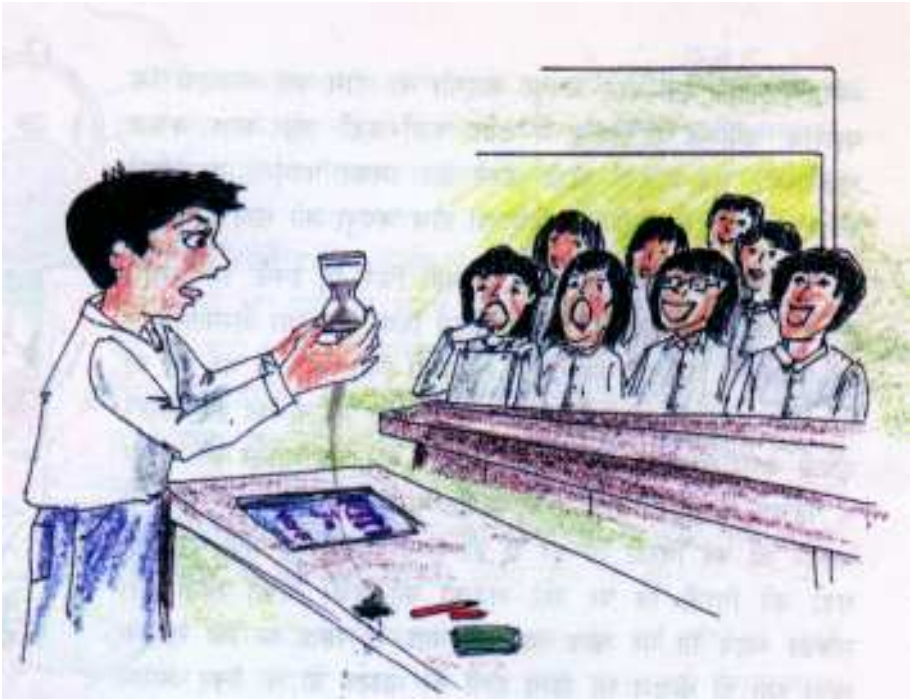

खिंचाई बंद होने के बाद मोटू कुछ मुटा गया है। पूरा गोलगप्पा लगने लगा है। छोटू भी लाल-लाल हो गया है, टमाटर जैसा। दोनों भाइयों के लिए पढ़ाई, स्कूल का काम, गणित के सवाल सभी कुछ एक चुटकी का काम हो गया है। याददाश्त भी जैसे किसी ने शान पर चढ़ा दी हो। बस एक बार कोई पाठ सुना तो सारा का सारा कंठस्थ। खोटू जो अब तक हमेशा पढ़ाई में पिछड़ा हुआ रहा है तथा परीक्षा शुरू होते ही हनुमान जी को नारियल चढ़ाने की सोचता रहा है, उसका भी नंबर अब आगे रहता है। स्कूल के मास्टर ताज्जुब करते हैं कि यह चमत्कार कैसे हुआ! खोटू-मोटू के पापा भी खुश हैं तथा मम्मी भी उतनी ही खुश, लेकिन हैरत में सभी हैं कि यह परिवर्तन आया कैसे? खेल ही खेल में सब कुछ सीख जाने का राज क्या है?

छोटू-मोटू और खोटू के मम्मी-पापा और मास्टर तो इस बात पर ताज्जुब कर रहे थे कि पढ़ाई में बिना किसी खिंचाई के, बिना किसी सजा के वे इतने तेज कैसे हो गए? उनके लिए यह समझना मुश्किल

था कि सीखने में आज़ादी के भी कुछ अर्थ होते हैं। लंबी सरकारी नौकरियों ने मास्टरों और माँ-बापों से आज़ादी का अहसास ही छीन लिया था। उनकी समझ से हर काम केवल हुक्म और ताकत से संभव था। सीखने के सहज स्वभाव को वे भूल गए थे। इसीलिए छोटू-मोटू की आज़ाद शिक्षा पर उनको ताज्जुब हो रहा था।

मगर खोटू-मोटू और उनकी पूरी मंडली केवल एक तरफ़ ही तेज़ नहीं हुई थी। शैतानी और कारस्तानी का स्तर भी कुछ ऊँचा हो गया था। इस तरफ़ भी इस मंडली का दिमाग पूरी तरह से दौड़ने लगा था। जब सब लोग ताज्जुब कर रहे थे, तभी इस मंडली ने एक नया चमत्कार दिखाने का फ़ैसला किया।

सबने मिलकर यह सलाह की कि मास्टरों की रेत-घड़ियों के बल्ब में छेद कर दिए जाएँ। फ़ैसला होने के बाद देर कैसे हो सकती थी! सारी पलटन फ़ैसले फटाफट लागू किया करती थी।

फ़ैसला लागू किया गया। स्टाफ़ रूम में रखी रेत-घड़ियों के बल्बों में छेद कर दिए गए। मास्टरों ने घड़ियाँ उठाईं, क्लास में चल दिए। घड़ियाँ उलट दीं, भाषण शुरू किया। नज़र बीच में घड़ी पर गई, तो बल्ब खाली थे। रेत गायब थी। समय फिर नदारद था। सारी क्लासें एक साथ ठहाके से गूँज उठी थीं। मास्टर लोगों को समझते देर नहीं लगी थी कि शरारत किसकी है।

शरारत काफ़ी बड़ी थी। लेकिन सभी शांत थे। किसी ने किसी की पेशी नहीं बुलाई थी। किसी को सज़ा नहीं मिली थी। जब से घड़ियाँ बंद हुई हैं, इस स्कूल में सबका गुस्सा गायब हो गया है। स्कूल शांत रहने लगा है। सहनशील बन गया है। मास्टर लोग भी उतने ही प्रसन्न हैं, जितने खोटू-मोटू व उनकी पलटन।

अध्याय 7

घड़ियाँ बंद हुई तो स्कूल के हाजिरी-रजिस्टर भी बंद हो गए। बच्चे देर से आएँ तो किसी को शिकायत नहीं थी। हैड मास्टर जी भी हैरत में थे कि जो बच्चे हमेशा पढ़ने से मुँह चुराते थे, वे भी पूरे उत्साह से पढ़ने लगे हैं। जो बच्चे सहमे-सहमे व उदास रहते थे, उनके चेहरों पर नयी चमक आ गई है और वे उछलते-कूदते अपनी पढ़ाई का अभ्यास कर लेते हैं। हैड मास्टर जी के लिए यह भी आश्चर्य की बात थी कि जो मास्टर कभी भी पढ़ाने में रुचि नहीं लेते वे भी बच्चों के साथ खेलने-कूदने लगे हैं और खेल ही खेल में सारे पाठ पढ़ा जाते हैं। ऐसे सभी अध्यापक खुश नज़र आने लगे थे, जो किसी-न-किसी मनमुटाव के कारण मुँह फुलाए फिरते थे। वे अध्यापक जो हमेशा बिना मन के स्कूल आते थे और अनमने भाव से स्कूल में समय काटकर चले जाते थे, अब स्कूल के हर काम

में पूरी रुचि लेते हैं। बच्चों और अध्यापकों में दोस्ती गहरी हो रही है।

स्कूल के वातावरण में दिनों-दिन प्रसन्नता जितनी बढ़ती जा रही है, हैड मास्टर जी की हैरत भी उतनी ही बढ़ती जा रही है। हैड मास्टर जी के साथ डिप्टी इंस्पेक्टर भी हैरान हैं। उनकी हैरानी यह है कि उनके पास इतने लंबे समय से कोई शिकायत नहीं पहुँची है। शिकायतें बंद हुईं तो सिफ़ारिशें भी बंद हुईं। शिकायतों और सिफ़ारिशों के बंद होने से दफ़्तर का वातावरण शांत था। दुखी मास्टरों का ताँता थमा हुआ था। अफ़सर लोग गपशप का समय निकाल लेते थे। एक दिन इंस्पेक्टर साहब और डिप्टी साहब चाय पर बैठकर बात कर रहे थे–

"स्कूलों से कई दिन से कोई शिकायत क्यों नहीं आई है? जिससे भी पूछा है, उसी ने तारीफ़ करते हुए कहा है कि स्कूल तो आश्रम हो गए हैं। सभी कुछ सुचारु रूप से चल रहा है। आपने इस परिवर्तन का कोई कारण पाया क्या?"

उत्तर मिला–"नहीं साहब! कारण नहीं मिला, लेकिन यह परिवर्तन घड़ियों की हड़ताल के बाद ही आया है।"

"घड़ियों के रुक जाने से मौज मनानेवालों की मंडली बढ़ती तो कुछ समझ में आता। यहाँ तो काम की रफ़्तार बढ़ी है। छुट्टी मनाने वाला मूड या ड्यूटी गोल करने का मूड तो स्कूलों से जैसे रफूचक्कर हो गया है। लगता है, बात कुछ और है। मैं चाहूँगा कि आप एक बार किसी स्कूल का दौरा कर आएँ और मालूम करें।"

इंस्पेक्टर साहब की बात अपने में सरकारी आज्ञा थी। इसका पालन हुआ। डिप्टी साहब दौरे पर चल दिए। प्रगति के कारण का पता लगाने चल दिए।

डिप्टी साहब बिना किसी खबर के स्कूल में पहुँचे थे, लेकिन सब कुछ व्यवस्थित था, काम चल रहा था। उनके पहुँचते ही हड़बड़ाहट हुआ करती थी। उनके आने की खबर सुनते ही तैयारी शुरू हो जाती थी। बच्चों को बताया जाता था कि इंस्पेक्शन होनेवाला

है। इस बार ऐसा कुछ भी नहीं हुआ। डिप्टी साहब का आश्चर्य और भी बढ़ गया। उन्होंने हैड मास्टर जी से अपने दौरे का उद्देश्य बताया। हैड मास्टर जी भी हैरान थे, जवाब क्या देते! हैड मास्टर जी ने सुझाव दिया कि स्टाफ़ की सभा बुलाई जाए। सुझाव का स्वागत हुआ। सभा बुला ली गई। सभा में डिप्टी ने वही सवाल पूछा, "ऐसी शांति, सहयोग और प्रगति क्यों?"

डिप्टी साहब का सवाल सभा में तैर रहा था, लेकिन सभी चुप थे। स्कूल के मास्टर जवाब जानते थे, लेकिन एक नए सवाल में उलझे थे- प्रगति की जाँच की ज़रूरत? जब प्रगति ठप हो गई थी, तब किसी ने क्यों नहीं पूछा कि काम ठप क्यों है? ऐसा सवाल कई मास्टरों के मन में कुलबुला रहा था कि डिप्टी साहब ने एक मास्टर जी से जवाब देने को कहा। मास्टर जी सकपकाए, लेकिन जवाब हाज़िर था। वे कहने लगे-

"ऐसे सुखद परिवर्तन का श्रेय तो घड़ियों की हड़ताल को है साब। घड़ियाँ बंद हुईं, तो बच्चे समय के आतंक से आज़ाद हुए। लेटलतीफ़ों की सज़ा बंद हुई, उनकी आदत बदली। स्कूल को घंटों के बँटवारे से मुक्ति मिली। बँटवारा बहुत बुरी चीज़ है। प्रार्थना, पढ़ाई और खेल का भी घंटों में बँट जाना तो और भी बुरा है।"

बोलते-बोलते मास्टर जी को लगा कि वे कोई ऐसी बात कह रहे हैं, जो बड़े साहब के दफ़्तर को बुरी लग सकती है। मास्टर जी स्वभाव से बहुत विनम्र थे, इसलिए पहले ही क्षमा चाहने लगे। उन्होंने क्षमा चाहते हुए पूछा, "कहीं कुछ बुरा तो नहीं लगा ना? माफ़ कीजिएगा, अगर मेरी कोई बात कड़वी लगे तो। आप अनुमति दें..."

"आप बेधड़क सारी बात साफ़-साफ़ बताइए। इसमें संकोच कैसा!" डिप्टी साहब बोले। मास्टर जी बयान कर रहे थे–

"बँटवारे की बात कह रहा था साब। हमारे स्कूलों में तो प्रार्थना का भी घंटा होता है और खेल का भी घंटा। उद्योग का भी घंटा होता है और श्रमदान का भी घंटा। दरअसल न तो घंटी बजाकर प्रार्थना का हुक्म दिया जा सकता है और न खेल का ही। हम हैरान थे कि प्रार्थना और खेल का घंटा क्यों होता है, लेकिन पिछले दिनों तो श्रमदान और नैतिक शिक्षा के घंटे भी घंटों की लिस्ट पर चिपक गए। यह हमारी समझ से तो बाहर की चीज़ है कि बिजली की मशीन की तरह आप जो बटन दबाएँ, वही काम होने लगे। दान-दक्षिणा, नाम-धाम तो वैसे ही किसी के हुक्म से नहीं होते, फिर छोटे-छोटे कोमल बच्चे मशीन का बटन दबाते ही प्रार्थना, श्रमदान या खेलना शुरू कर देंगे, यह सोचना तो समझदारी नहीं हुई, लेकिन सरकारी हुक्म था, तो ऐसा होता रहा। मास्टर भी ऐसा करते रहे और बच्चे भी बिना मन ऐसा करने को विवश थे। जब से घड़ियाँ रुकी हैं, तभी से बच्चे घंटों के इस बँटवारे से बचे हैं। तभी से बच्चे थोड़ा उन्मुक्त महसूस करने लगे हैं और तभी से खुशियाँ लौटी हैं। खुशियों के साथ उनकी पढ़ाई भी लौटी है।"

मास्टर जी शायद आगे भी कुछ कहते, लेकिन बीच में ही डिप्टी साहब ने पूछा, "तो मास्टर जी! आप क्या अलग विषयों के घंटे भी ज़रूरी नहीं समझते हैं?" डिप्टी साहब के इस सवाल का जवाब भी हाज़िर था। वे बोले–

"अभी जिस तरह घंटों में बाँटकर विषय पढ़ाए जाते हैं, वह तो ग़ैरज़रूरी ही है। हमें यह हक किसने दिया कि हम यह तय करें कि

फलाँ क्लास के बच्चे फलाँ समय फलाँ विषय पढ़ेंगे। पढ़ाई बच्चों को करनी है। उनकी रुचि का ध्यान रखना भी तो जरूरी है। फिर यह भी जरूरी नहीं है कि सभी बच्चे एक ही समय एक ही रुचि रखते हों। बच्चों की रुचियों का ऐसा स्कूलीकरण कैसे सही कहा जा सकता है? विषयों की सही समझ उस समय आएगी, जब बच्चों को पूरी स्वतंत्रता देकर उस विषय विशेष में उसकी रुचि पैदा करके उसे सीखने में उसकी सही मदद की जाएगी। जब से घंटों का बंधन टूटा है, यही संभव होने लगा है। जब जिस लड़के को जो कुछ समझना है, वह खुद आता है, सवाल पूछता है। अपनी मर्जी से जब जो पढ़ना चाहे, पढ़ता है। यह दूसरा कारण है प्रगति का, स्कूल की खुशी का।''

डिप्टी साहब मास्टर जी की बात से प्रभावित थे, उन्हें सारी बात समझ में आ रही थी। उन्हें लगा कि मास्टर जी को शायद कोई तीसरा कारण भी पता है। उन्होंने पूछा, ''तो कोई तीसरा कारण भी आप जानते हैं क्या?'' मास्टर जी के पास तीसरा कारण भी तैयार था। वे बोले–

"तीसरा कारण मास्टरों की आज़ादी है। घड़ियाँ जब से रुकी हैं, हाज़िरी-रजिस्टर बंद हुए हैं। इससे पहले दस-पंद्रह मिनट की देरी होने पर मास्टरों के नाम के आगे हैड मास्टर जी लाल निशान लगाते थे। फिर दिन में उनकी पेशी होती थी। उससे बात उलझती थी। गाँठें पड़ती थीं। यही गाँठें स्कूल की प्रगति में बाधक थीं और यही गाँठें... स्कूल में मनमुटाव की ऐसी गाँठें... और भी गँठीली होती थीं, जब मास्टर की पेशी बच्चों के सामने चर्चा की बात बनती थी। इसी से मास्टर का उत्साह मारा जाता था। समय पर पहुँचना और पेशी से बचने का डर हर समय उस पर सवार रहता था। अब जब से उस डर से मुक्ति मिली है और मास्टर को आज़ादी मिली है, तभी से प्रगति लौट आई है। उस्ताद की आज़ादी का सवाल भी तो उतना ही बड़ा था साब!"

डिप्टी साहब को सारी बात समझ में आई। बच्चों की आज़ादी की बात भी समझ में आई। उस्ताद की आज़ादी की बात भी समझ में आई। उन्हें समझ में आया कि सही आज़ादी आए तो प्रगति अपने आप आती है। उन्हें यह भी समझ में आया कि सही आज़ादी आए तो आपसी झगड़े खुद-ब-खुद खत्म हो जाते हैं।

डिप्टी साहब सारी बात समझकर बड़े हैरान थे। यही हैरानी साथ लिए वे बड़े साहब के बड़े दफ़्तर गए। हैड मास्टर साहब की हैरत भी मिटी। उन्हें समझ में आया कि आज़ादी कितनी अच्छी होती है और समय का बच्चों और मास्टरों पर सवार होना कितना बुरा होता है।

अध्याय 8

राजधानी का बदला हुआ नक्शा राजधानी के आकर्षण की बात बन गई थी। दूसरी ओर स्कूलों का बदला हुआ रूप शिक्षा विभाग के लिए सोच-विचार का विषय बना था। शिक्षा विभाग ने इस नए चमत्कार पर शिक्षाविदों की समिति की राय माँगी थी। राजधानी में सब तरफ़ से आए घड़ीसाज़ों की टीम के बयान अभी भी जारी थे। सगतपुर, खैरागढ़ व बजबज के घड़ीसाज़ों के बाद अब बीकानेर के घड़ीसाज़ का नंबर था।

बीकानेर से आए घड़ीसाज़ ने सभी घड़ीसाज़ों को अपनी ओर आकर्षित किया। उसका रूप-रंग भी निराला था और बातें भी निराली थीं। गोलमटोल कद, मोटा पेट, उस पर लटकता मोटा जनेऊ, गले में रुद्राक्ष की मोटी माला, गंजा सिर, पीछे लटकती गाँठ वाली मोटी चोटी, गोल चेहरे पर गोल काँच का चश्मा और मुँह में दबाए पान से उभरा दायाँ गाल सभी को आकृष्ट करने को काफ़ी थे। किसी का ध्यान इस पर न जाए, तो उसके हाथ में लटकती तूँबी पर ज़रूर जाएगा या फिर उसके कंधे पर लटकते अँगोछे पर जाएगा, जिसमें दोनों सिरों पर दो बड़ी गाँठें लगी हैं। बीकानेर के ये

बाबा जी चलते हैं, तो इनकी खड़ाऊँ खट-खट करके सभी को आकर्षित करती है।

घड़ीसाज़ों की टीम में सभी आँखें बाबा जी को घूरती रहती हैं। बाबा जी का वहाँ पालथी मारकर बैठना तथा पान चबाते-चबाते रुद्राक्ष के मनकों पर अँगुली चलाना सबको विस्मित कर रहा था। जब विस्मय बढ़ता गया, तो लेह-लद्दाख के घड़ीसाज़ ने सरकारी अफ़सर से पूछा कि बाबा जी की तारीफ़ क्या है? लेह-लद्दाख के घड़ीसाज़ के सवाल करने पर सरकारी अफ़सर को याद आया कि सबका परिचय कराना जरूरी था, लेकिन हड़बड़ाहट में वह भूल ही गया था। उसके पास टीम के सभी घड़ीसाज़ों के जीवन परिचय भी छपे रखे थे। टीम बनाने से पहले ही सबके परिचय प्राप्त कर लिए गए थे। सरकारी अफ़सर ने तुरंत वही परिचय लेह-लद्दाख के घड़ीसाज़ को पकड़ा दिया। परिचय में लिखा था–

'बीकानेर के बाबा रामनाथ जी आ रहे हैं। वे इस जिले के नामी घड़ीसाज़ हैं। वे गृहस्थ नहीं हैं। पूरे संन्यासी भी नहीं। एक रामद्वारे में इन्होंने पुजारी का काम शुरू किया था। वहीं के बड़े पुजारी से घड़ी ठीक करने का काम भी सीखा था। सवेरे-शाम पूजा के अलावा इनके पास दूसरा कोई काम नहीं है। दिनभर बैठे-बैठे घड़ियाँ सुधारते हैं। घड़ी सुधारते हुए थक जाएँ तो ताश खेलने लगते हैं। दोनों कामों में बाबा जी पूरे सिद्धहस्त हैं। एक तीसरा काम है– माल-मिठाई खाने का। इसमें इनकी बराबरी का दूसरा कोई नहीं। पूरी पाँच सेर मिठाई खाते हैं, एक वक्त में। शहर में कहीं भी कोई दावत हो, तो बाबा जी सदा आमंत्रित हैं। स्वभाव से प्रेमी हैं। बचपन से ही ज्ञानी-ध्यानी हैं। घड़ियों को भी पूरे प्रेम से व ध्यान से ठीक करते हैं। कंधे पर लटकते अँगोछे के एक सिरे पर औजार व आँख पर पहनने का काँच बाँधकर रखते हैं तथा दूसरे सिरे पर भाँग की गोली साथ बाँधकर चलते हैं। खाने का आयोजन हो, तो पहले भाँग चाहिए और कभी किसी की घड़ी रूठ जाए तो उसकी नब्ज़ देखने का सामान भी साथ जरूरी है।'

बीकानेर के बाबा रामनाथ जी का परिचय पढ़कर सभी घड़ीसाज़ उनकी बात सुनने को उतावले थे। बाबा जी की बारी आई तो वे पान की पीक सँभालते हुए, नीचे के होंठ को थोड़ा ऊपर उठाकर महात्मा जी की मुद्रा और कथावाचक की आवाज़ में कहने लगे–

"बेटे! घड़ियों के ठहरने का कारण बड़ा गूढ़ है। इसका अर्थ भी उतना ही गूढ़ है। ज़रा समझो कि किसी का समय कब ठहरता है?... जब उसका अंतकाल नजदीक आता है। यह कलयुग के अंतकाल का लक्षण है। कलयुग में आदमी कलों का ही गुलाम हुआ हो ऐसी बात नहीं। वह स्वार्थ में अंधा हो गया है। अपने स्वार्थ में सिकुड़ते लोग हर दूसरे आदमी से कटते जा रहे हैं। सभी को अपनी रोटी सेंकने की चिंता है। दूसरे की रोटी का क्या होगा, इसकी चिंता किसी को नहीं है। पिछले दिनों हर शहर में हड़ताल हुई। आए दिन होती हड़तालों की होड़ ने एक भी माँग ऐसी नहीं रखी, जो जनता-जनार्दन से जुड़ी हो। उसके दुख-दर्द से जुड़ी हो। समय तो सबका सरीखा होता है बेटे। देश की सारी घड़ियों ने ठहरकर सभी स्वार्थी नेताओं से, आम आदमी से जुड़ने का तकाज़ा किया है। सबके समय को सरीखा समझने का संदेश दिया है।"

सरकारी अफ़सर ने बीच में पूछा, "आपके शास्त्र तो ऐसा नहीं मानते हैं। वे तो अपने-अपने कर्म की बात करते हैं। फिर सबका समय एक-सा कैसे होगा?"

बाबा रामनाथ जी तमककर बोले, "शास्त्रों-वास्त्रों की बात आप छोड़िए। ऐसे सारे शास्त्र कपोलकल्पित हैं। पंडों की करामात हैं। वे सारे शास्त्र फ़ालतू हैं, जो आदमी की पीड़ा से छल करते हों। आदमी की पहली ज़रूरत रोटी, कपड़ा है, उसके परिवार की सुख-शांति है, उसके बच्चों की मुस्कराहट है। इसके अलावा कोई बात हमारी समझ में नहीं आती।"

बाबा जी पान की पीक थूकना चाहते थे। उठे, इधर-उधर देखा, कोई जगह नहीं दिखी तो वहीं सरकारी दफ़्तर के कोने में पान की पीक थूककर आगे कहने लगे –

"हम तो अकेले जीव हैं, फिर भी पेट हमारा सगा नहीं है। मंदिर में रहें चाहे सड़क पर काम करें, पेट को दो जून की रोटी जरूर चाहिए। आज समय खराब आ गया है। करोड़ों लोग दाने-दाने को मोहताज हो गए हैं। बाजार भाव आसमान चढ़ गए हैं, चीजें सारी तहखानों में पहुँच गई हैं, तब भी रेलवाले अपनी बात करते हैं, डॉक्टर अपनी बात करते हैं, बाबू लोग अपनी सोचते हैं। वे हड़ताल करते हैं। अपनी तनख्वाह बढ़वाते हैं और चुप हो जाते हैं। हमारी कौन सोचता है। उन करोड़ों मजूरों की कौन सोचता है, जो कहीं नौकरी नहीं करते। उन सबके पेट भी तो रोटी माँगते हैं, लेकिन किसी हड़ताल की माँग उन सबकी जरूरतों से नहीं जुड़ी है। आम आदमी की जरूरतों से नहीं जुड़ी है। अब जब घड़ियाँ रुकी हैं, तो सभी को पता चला है, समय सबका सरीखा है। अफ़सर भी हैरान हैं और बाबू भी! मालिक भी हैरान हैं और नौकर भी! ठेकेदार भी परेशान और मजूर भी! दुकानदार भी खफ़ा हैं और खरीददार भी! आज घड़ियों ने ठहरकर तकाज़ा किया है कि सभी एक-दूसरे से जुड़ें, सबकी माँगें सबके लिए हों और सबकी यूनियन एक हो। रोटी-कपड़े का संकट अगर दूर करना है, तो सबको सबसे जुड़ना होगा। संगठन और संघर्ष का दायरा फैलाना होगा। माँगों की सूची में दरिद्रनारायण की माँगों को सबसे ऊपर रखना होगा और उसे हासिल करने के लिए हर तबके के हर आदमी को साथ लेना होगा। घड़ियों का तकाज़ा, समय का तकाज़ा है बेटे! तुम भी अपनी सरकार को सावधान कर दो। अफ़सरों और मंत्रियों से कह दो कि आसमान से उतर आएँ, आदमी के साथ जुड़ जाएँ। इसमें अगर देर की तो परिणाम बुरे होंगे।"

बीकानेर के बाबा रामनाथ ने अपनी बात एक तीखी चेतावनी के साथ समाप्त की थी। अपनी बात कहते-कहते उनका चेहरा तमतमा गया था। उनकी चेतावनी सभी घड़ीसाज़ों को सही लगी थी। सभी उनकी बात सुनकर सिर हिला रहे थे, लेकिन सरकारी अफ़सर को उनकी ऐसी चेतावनी व 'बेटा-बेटा' कहना अच्छा नहीं लगा था। बाबा जी फक्कड़ थे। उनसे कहा भी क्या जा सकता था! अफ़सर ने चुपचाप बाबा जी का बयान सरकारी बही में दर्ज किया। उसमें लिखा गया कि–

'बीकानेर के बाबा रामनाथ जी, पता नवलनाथ जी का मठ, का कहना है कि घड़ियाँ कहती हैं कि रोटी-कपड़े का संकट यदि दूर करना है, तो सारी यूनियनों को एक होना होगा, सबको आम आदमी से जुड़ना होगा तथा रोटी-कपड़े के संघर्ष में हर तबके के हर आदमी को शरीक करना होगा। बाबा जी ने मंत्रियों और अफ़सरों को भी चेतावनी दी है कि वे आसमान से उतरें और आदमी से जुड़ें।'

सरकार की बही में बाबा रामनाथ जी के बयान के नीचे यह भी लिखा था–

'विशेष

बाबा रामनाथ जी जनसाधारण के हिमायती हैं। आम आदमी में इनकी आस्था गहरी है। बाबा जी जनांदोलन के भी हिमायती लगते हैं। इन पर नज़र रखना ज़रूरी है।

–हस्ताक्षर'

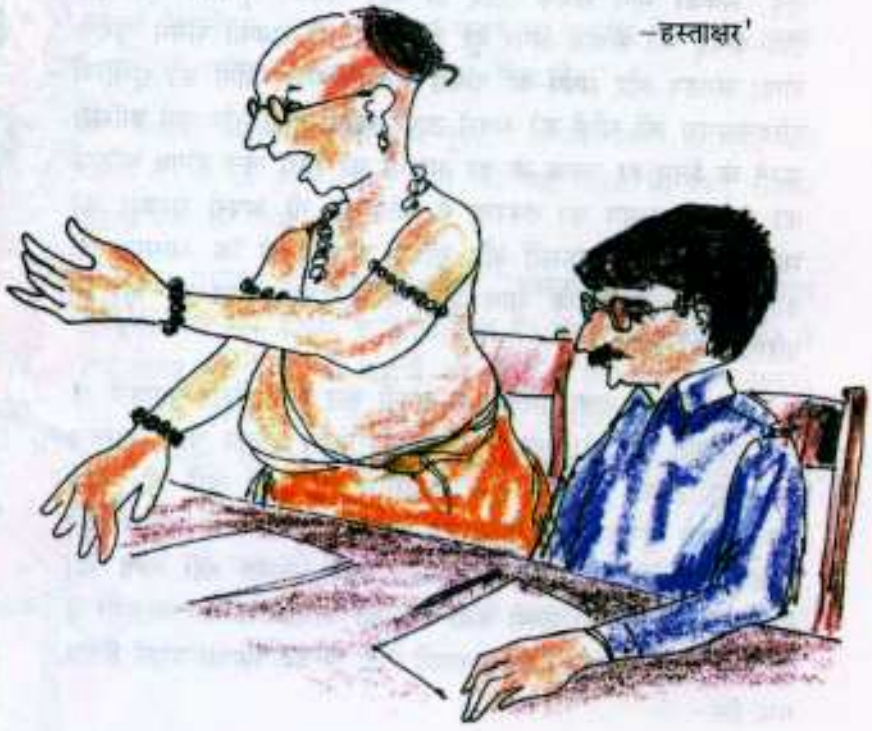

बीकानेर से आए घड़ीसाज़ बाबा रामनाथ का बयान दर्ज हो चुका है। उनसे मिली सूचना की खबर ने सरकारी जासूसों का काम बढ़ा दिया था। जिस जासूस की ड्यूटी बीकानेर लगी थी, वह खुश हुआ था। उसने सोचा था कि बीकानेर की भुजिया खाने को मिलेंगी, रसगुल्ले खाने को मिलेंगे, लेकिन जब वह बीकानेर पहुँचकर बाबा नवलनाथ जी के मठ पहुँचा, तो बेचारे सरकारी जासूस की सिट्टी-पिट्टी गुम हो गई। बाबा रामनाथ जी अपने ज़माने के नामी पहलवान रहे हैं। उनके पास आज भी कई शागिर्द कुश्ती सीखने आते हैं। उनके शागिर्द ही ऐसे सुंड-मुस्टंड और कद्दावर हैं कि सरकारी जासूस जैसे चार उनकी बगली में छुप जाएँ। फिर भी जासूस महोदय हनुमान जी के दर्शन के बहाने वहाँ पहुँचने लगे। उनको रामनाथ जी के शागिर्दों से पता चला कि बाबा रामनाथ जी अपनी जवानी में मुगदर घुमाते थे, पाँच-पाँच सौ दंड-बैठक लगाते थे और खड़े-खड़े पक्का पाँच सेर घी पी जाते थे। उसने यह भी सुना कि बाबा अब भी अगर किसी को एक धौल लगा दें तो उसे दस दिन होश नहीं आएगा। यह सब सुनकर जासूस महोदय हमेशा डरे रहते थे तथा ऐसे मस्तमौला फक्कड़ पर नज़र रखनी फालतू समझते थे। उन्होंने जो रपट भेजी थी, उसमें लिख दिया था– 'कहीं कोई खतरा नहीं है।' अपनी रपट के साथ ही उन्होंने अपने तबादले की अर्ज़ी भी भेज दी थी। वे अब सिर्फ़ तबादले के ऑर्डर का इंतज़ार करते थे और हर शाम भुजिया-रसगुल्ला खाकर समय काट रहे थे। घर पहुँचने के दिन गिन रहे थे।

घड़ियाँ अब भी बंद थीं। रामनाथ जी बयान दर्ज कराकर दिल्ली से बीकानेर लौट आए थे। कसरत जारी थी। उधर दिल्ली में दूसरे घड़ीसाज़ों के बयान चल रहे थे। समय ठहरा था। समय-भवन मगर चल रहा था। यहाँ बयान भी चल रहे थे और फ़ाइलें भी चल रही थीं। समय-मंत्री नए थे। इसलिए वे भी चल रहे थे। वे हर घड़ीसाज़ के बयान से चौकन्ने हो जाते लगते थे तथा रोज़ एक वक्तव्य दे देते थे– "हम पूरी तरह चौकन्ने हैं, समय को तलाश रहे हैं, जल्दी ही खोज लेंगे।"

अध्याय 9

बीकानेर के घड़ीसाज़ के बाद बैंगलुरु के घड़ीसाज़ की बारी थी। बैंगलुरु का घड़ीसाज़ बाकी घड़ीसाज़ों की तरह बूढ़ा नहीं था। जवान घड़ीसाज़ ने शौकिया ढंग से घड़ियाँ सुधारने का काम शुरू किया था, लेकिन उसकी लगन और उसकी समझ के कारण उसका शौक उसकी ज़रूरत बन गया था, उसका व्यसन बन गया था।

घड़ियाँ सुधारते-सुधारते उसे लगने लगा था कि यह काम सबसे पवित्र काम है। यह काम आम आदमी के समय से जुड़ने का काम है। उसे सही समय बताते रहने का काम है। समय की कीमत उसने अच्छी तरह समझी थी। उसके मन में अपने मास्टर जी से बचपन में सुनी बात भी अभी तक बसी हुई थी। उसके मास्टर जी ने अंग्रेज़ी शब्द 'वॉच' का अर्थ बताया था तथा उसकी व्याख्या की थी।

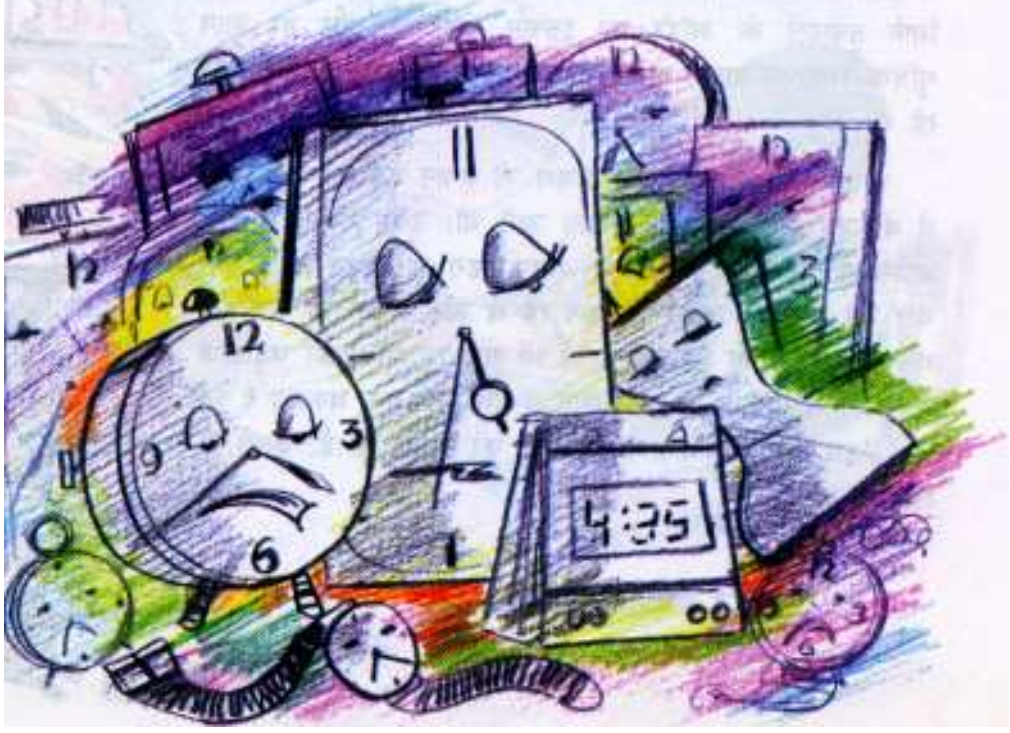

उसके मास्टर जी ने बताया था, 'वॉच' का अर्थ रक्षा करना है। पहरेदार हमारी रक्षा करता है। इसलिए उसको 'वॉचमैन' कहते हैं। घड़ियाँ भी हमसे महत्त्वपूर्ण चीजों की रक्षा करने की बात कहती हैं। मास्टर जी की व्याख्या यूँ थी–

W वॉच योर वैल्थ	अपने धन की रक्षा करो।
A वॉच योर एसपिरेशंस	अपनी इच्छाओं पर काबू रखो।
T वॉच योर टाइम	अपने समय की रक्षा करो।
C वॉच योर केरेक्टर	अपने चरित्र की रक्षा करो।
H वॉच योर हैल्थ	अपने स्वास्थ्य की रक्षा करो।

अपने मास्टर जी की यह व्याख्या अभी भी उसके दिमाग में उतरी हुई थी। वह कई बार 'वॉच' की व्याख्या अपने मित्रों के बीच दोहराता है। उसके मित्र इसलिए उसे मजाक में 'वॉचमैन' कहा करते थे। वह उसके बारे में कहा करते थे, वॉचमैन की बात निराली है। वह तो सभी को 'वॉच' करता है। जब देखो तब यही कहेगा– 'वॉच योर टाइम, वॉच योर केरेक्टर...'

घड़ियाँ बंद होने से पहले ही बैंगलुरु के इस 'वॉचमैन' को पता चल गया था कि घड़ियाँ एक दिन जरूर कभी हड़ताल करेंगी। उसने अपने घर में रखी घड़ियों को बातचीत करते सुना था। घड़ियाँ बैंगलुरु में खुले घड़ियों के सरकारी कारखाने के बारे में बात कर रही थीं–

पहली घड़ी–*सुना है, अब तो भारत सरकार ने भी आला घड़ियाँ बनाने का कारखाना खोला है। सरकारी कारखाने की इन उम्दा घड़ियों की बिक्री भी खूब हुई है।*

दूसरी घड़ी–*घड़ियों की बिक्री बढ़ने की बात तो अच्छी है और सरकारी कारखाना उम्दा घड़ियाँ बना लेता है, यह भी बड़ी बात है। सरकारी कारखानों का नफ़ा तो जनता को ही मिलता है। इसलिए यह भी अच्छी बात है कि वहाँ बिक्री बढ़े, लेकिन घड़ियों का सरकारी कारखाना लगने में एक बड़ा खतरा है।*

तीसरी घड़ी–*कैसा खतरा?*

दूसरी घड़ी–*सबसे बड़ा ख़तरा है–समय के सरकारीकरण का खतरा। समय पर सत्ता के अधिकार का खतरा। अभी तो हम सब*

पृथ्वी की परिक्रमा के हिसाब से घूमती हैं, लेकिन फिर खतरा है, सरकारी कानून से चलने का खतरा। सरकार जब घड़ियाँ बनाने लगी है, तो संभव है अपने यहाँ बनी सारी घड़ियों के पुर्जों को इस तरह बैठा दे कि वे सरकारी मर्जी के मुताबिक समय देने लग जाएँ। तब सरकारी कानून भी घड़ियों को मानने होंगे। सरकार जब जितना चाहे बजा देने का कानून भी बना सकती है। समय पर सत्ता के ऐसे अधिकार से ही तो जनतंत्र को खतरा है।

दूसरी घड़ी की यह बात सारी घड़ियों को सही लगी थी। सबको यह सब सुनकर चिंता हुई थी। बैंगलुरु के घड़ीसाज मि. वॉचमैन इसी बात से समझ गए थे कि एक दिन घड़ियाँ जरूर आंदोलन छेड़ेंगी। हुआ भी ऐसा ही। उसी दिन से बैंगलुरु की घड़ियों को उसने उदास देखा। इसी उदासी के बीच उसने देखा कि घड़ियों की कानाफूसी की आदत बढ़ गई है। यह कानाफूसी दरअसल इसी विषय पर होती थी कि समय के सरकारीकरण का विरोध कैसे किया जाए! क्या कदम उठाया जाए? कोई कदम उठाएँ इससे पहले घड़ियों ने सरकारी कारखाने का हाल जान लेना जरूरी समझा। यह काम उन्होंने उसी कारखाने के एक मजदूर की घड़ी को सौंपा था।

दूसरे दिन नेशनल मशीन टूल्स के मजदूर की घड़ी ने बताया था– "समय का सरकारी व्यापार दिनोंदिन बढ़ रहा है। अब तो

सरकारी कारखाने ने तारीख व दिन बतानेवाली ऑटोमैटिक घड़ियाँ भी बना दी हैं।" मजदूर की उस घड़ी ने आगे बताया– "सरकारी कारखाना शुरू हुआ था, सस्ती घड़ियाँ बनाने और उन्हें वाजिब दाम पर बेचने के लिए, लेकिन अब तो वही कारखाना महँगी घड़ियाँ भी बनाने लगा। सेठ लोगों व संपन्न लोगों की शान को ध्यान में रखते हुए सरकारी कारखाने ने सोने की घड़ियाँ भी बनानी शुरू की हैं। इसी बात से उस कारखाने की घड़ियाँ भी दु:खी हैं और वहाँ के मैकेनिक लोग भी। वे सब यह समझ नहीं पा रहे हैं कि समानता लानेवाली और असमानता मिटाने का दावा करनेवाली समाजवादी सरकार ऐसा क्यों कर रही है! सरकारी कारोबार के बढ़ने के साथ ही इस कारखाने की घड़ियों और मैकेनिकों की हैरत बढ़ गई है।"

यह सब जानकर बैंगलुरु की घड़ियों के सामने यह साफ़ हो गया कि सरकार कभी भी घड़ियों का और समय का सरकारीकरण कर सकती है। बैंगलुरु की घड़ियों के लिए अब इसका विरोध करना भी आसान हो गया था, क्योंकि खुद सरकारी कारखाने में ही असंतोष था। वहाँ की घड़ियाँ भी विरोध की किसी कार्रवाई में शामिल होने को तैयार थीं।

बैंगलुरु के घड़ीसाज़ के पास यह जानकारी पहले से ही थी। जब घड़ियों की हड़ताल हुई, तो वह समझ गया कि अंतत: घड़ियों ने कोई कदम उठा ही लिया। बैंगलुरु का युवक घड़ीसाज़ घड़ियों की इस सीधी कार्रवाई से खूब खुश था। वह चाहता था कि घड़ियाँ इस प्रकार मन ही मन न घुटें। वह यह भी मानता था कि आज की दुनिया में अगर कोई सीधी कार्रवाई नहीं करता है, तो सुनवाई संभव नहीं। उसे घड़ियों का डर भी सही लगा था। वह भी घड़ियों की ही तरह परेशान था कि असमानता मिटानेवाली सरकार असमान चीज़ों का उत्पादन क्यों करती है? उनकी बिक्री क्यों करती है? वह स्वयं इन सवालों पर पिछले कई दिनों से सोचता रहा है। घड़ियों के साथ उसका रिश्ता चूँकि नैतिक है, इसलिए घड़ियों की पीड़ा उसकी पीड़ा है। सरकारी बुलावा आने पर उसने तय किया था कि वह पूरी ताक़त के साथ घड़ियों की पैरवी करेगा, उनकी वकालत करेगा।

अपना नंबर आते ही मि. वॉचमैन ने सारा किस्सा कह सुनाया। बाकी सारे घड़ीसाज़ों को बैंगलुरु की घड़ियों की चिंता सही लगी। मामला सरकारी सिद्धांतों और नीति से जुड़ा था। इसलिए सरकारी अफ़सर ने बैंगलुरु के मि. वॉचमैन की बात सरकारी बही में लिखने से पहले वहाँ उपस्थित नेशनल मशीन टूल्स के चीफ़ इंजीनियर की राय माँगी। उस चीफ़ इंजीनियर ने भी अपने कारखाने में एक खास तरह का असंतोष पाया था। उसने अपनी राय देते हुए कहा–

"इनकी बात सही लगती है। ऑटोमैटिक व रोल्ड-गोल्ड घड़ियों को लेकर हमारी यूनिटों में विवाद खड़ा हुआ था। मैकेनिकों का कहना था कि महँगी घड़ियों का निर्माण बंद होना चाहिए।"

एन.एम.टी. के चीफ़ इंजीनियर की राय जानकर सरकारी अफ़सर ने मि. वॉचमैन का बयान दर्ज किया। बयान में लिखा गया था–

'बैंगलुरु की घड़ियों को भय है कि समय पर शीघ्र ही सत्ता का अधिकार होनेवाला है। सरकारी कारखाना घड़ियों में भी कोई ऐसा पुर्ज़ा बैठाने वाला है, जिससे घड़ियाँ सरकार की मर्ज़ी और मूड के मुताबिक चला करेंगी। घड़ियाँ मानती हैं कि समय पर सत्ता का यह अधिकार लोकतंत्र विरोधी बात है। उनका यह भी तर्क है कि सरकारी कारखाने द्वारा कीमती घड़ियों का निर्माण सरकार की अपनी नीति के खिलाफ़ है– इससे असमानता बढ़ती रहेगी, मिटेगी नहीं।'

बयान दर्ज हुआ, मामला महत्त्वपूर्ण समझा गया। सारा किस्सा टाइप कराकर संबंधित अफ़सरों व मंत्रियों के पास उसी वक्त विशेष हरकारों के साथ भेज दिया गया। बैंगलुरु का घड़ीसाज़ यह सब देखता रहा। उससे अधिक देर चुप न रहा गया, वह बोला, "कागज़ी कार्रवाई और घड़ियों की कार्रवाई में जो फ़र्क़ है, उसे देखिए साहब!"

सरकारी अफ़सर अपनी कार्रवाई का पक्का था। वह बिना उस तरफ़ ध्यान दिए अगली कार्रवाई के कागज़ ही पलट रहा था।

अध्याय 10

कागज़ों में अगला नंबर नाथद्वारा से आए घड़ीसाज का था। इसके बावजूद चूँकि बैंगलुरु की घड़ियों ने एन.एम.टी. के कारखाने का उल्लेख किया था, इसलिए सरकारी अफ़सर की राय थी कि एन.एम.टी. के इंचार्ज इंजीनियर का बयान पहले ले लिया जाए। इस बात पर सबकी सहमति लेकर एन.एम.टी. के इंजीनियर साहब से घड़ियों की हड़ताल का कारण या इसके बारे में किसी दूसरी जानकारी के बारे में पूछा गया।

इंजीनियर साहब सरकारी नौकर थे। अपनी नौकरी की चिंता उनकी सबसे बड़ी चिंता थी। वे जितना कुछ जानते थे या इस सभा में आने से पहले जितना कुछ जान सके थे, वह बताना भी वे खतरे

से खाली नहीं समझते थे। उन्होंने अपनी झिझक दबाते शब्दों में माफ़ी माँग लेना ही ठीक समझा। वे बोले, "मैं तो सरकारी नौकर हूँ। आप मेरी राय न माँगें तो अच्छा है। मैं माफ़ी ही चाहूँगा।"

"नहीं, ऐसा नहीं हो सकता। आप ही तो सरकारी कारखाने के इंचार्ज हैं। आपकी बात पर किसे आपत्ति हो सकती है? फिर इस समिति को तो खुद सरकार ने सारे अधिकार दिए हैं। आप बिना किसी झिझक के सारी बात साफ़ बतलाएँ।" सरकारी अफ़सर ने कहा। एन.एम.टी. के इंजीनियर साहब ने साहस बटोरा तथा बताया–

"एन.एम.टी. की एक ब्रांच सरकारी दफ़्तरों की घड़ियों की मरम्मत का काम करती है। इसी ब्रांच में अभी थोड़े दिन पहले ही संसद की दो बड़ी दीवार-घड़ियाँ मरम्मत के लिए आई थीं। उनकी मरम्मत की जाने लगी, तो वे मैकेनिक से बोलीं–

'तुम क्यों अपना समय गँवाते हो और क्यों फ़िजूल में दिमाग खराब करते हो। संसद में सही समय की जरूरत किसे है? जिस बहस से जिस सदस्य का स्वार्थ जुड़ा रहता है या जिस प्रस्ताव से जिस मंत्री का मतलब होता है, केवल वही वहाँ पर सही समय पर पहुँचता है। कई सदस्य तो सदन से नदारद ही रहते हैं।'

मैकेनिक संसद की घड़ी की बात सुनकर चौंका था। उसे समझ में नहीं आ रहा था कि संसद में ऐसा कैसे हो सकता है। हैरान मैकेनिक हक्का-बक्का रह गया था। उसे अवाक देखकर संसद की घड़ी ने अपनी बात स्पष्ट करते हुए कहा–

'संसद में सारे लोग या तो समय पर तब पहुँचते हैं, जब बहस के विषय से उनका अपना स्वार्थ जुड़ा हो। अगर उनके स्वार्थ का कोई तकाजा न हो तो जरूरी नहीं है कि वे वहाँ पहुँचें ही। आपने अखबार में भी पढ़ा होगा कि जब संसद चल रही थी, तो कोई सदस्य मुंबई में फ़िल्म बना रहे थे या फिर कोई वहीं बैठकर ऊँघ रहे थे।'

'तो क्या हमारी संसद भी स्वार्थों से ऊपर नहीं उठी है? क्या संसद भी जनता के सुख-दुःख से नहीं जुड़ी है?' मैकेनिक ने पूछा।

संसद की बीमार घड़ी ने दर्दभरी आवाज में कहा–'मिस्त्री जी! आप अब भी ऐसा मानते हैं– यह आपकी महानता है। इस देश की

सारी जनता ही ऐसा मानती है, वह ऐसा मानती भी रहेगी। शायद हमेशा ऐसा ही मानती रहे। दरअसल अपनी परंपरागत जनता का विश्वास बहुत गहरा है, इस विश्वास की जड़ें बहुत गहरी हैं। यह विश्वास ही उसकी सबसे बड़ी ताकत है। इस विश्वास का टूट जाना अपने-आप में बहुत बड़ी दुर्घटना होगी। संसद की घड़ियों ने हमेशा चाहा है कि वह विश्वास सदा बना रहे, लेकिन आज जनता और संसद के बीच फ़ासला बढ़ता जा रहा है। संसद सदस्यों के मन सिकुड़ते जा रहे हैं व उनके दिमाग संकुचित होते जा रहे हैं। इससे संसद का गौरव घटा है। संसद की घड़ियों के लिए यह हालत काफ़ी चिंता की बात है और सारी घड़ियाँ बहुत निराश हो गई हैं।'

इस घटना को अभी बहुत अधिक दिन नहीं हुए थे और इधर घड़ियों की हड़ताल हो गई। मैं समझता हूँ घड़ियों की हड़ताल का एक बड़ा कारण यह भी हो सकता है।''

एन.एम.टी. के इंचार्ज इंजीनियर ने अपनी बात खत्म करने से पहले अपने बचाव में भी कुछ कह लेना काफ़ी जरूरी समझा, वह बोला—

''यह सूचना मुझे मरम्मत विभाग के मिस्त्री ने दी है। उसने जो कुछ बताया, वही मैंने आपको बिना किसी जोड़-तोड़ के यूँ का यूँ बताया है। बड़े साहब को कुछ बुरा लगे तो कहना माफ़ करें।''

इंजीनियर साहब को अपने बचाव का पूरा खयाल था और बड़े अफ़सरों को वे किसी भी कीमत पर नाराज नहीं होने देते थे। उनके इस बयान में भी उनकी यह सावधानी साफ़ झलकती थी। वे खुद किसी बात के लिए जवाबदार नहीं रहे थे। सारी बात उन्होंने मरम्मत विभाग के मैकेनिक पर थोप दी थी। इस बात को उन्होंने ज़ोर देकर कहा था कि मिस्त्री की बात को उन्होंने यूँ का यूँ 'बिना किसी जोड़-तोड़ के' कहा है। इस पर अगर बड़े साहब को कुछ बुरा लगे तो उन्होंने माफ़ी माँग ली थी। सीधे बड़े साहब से ही यूँ माफ़ी चाहने का एक और मतलब भी था— बड़े साहब के बड़प्पन और रौब को स्वीकार करते हुए उन्हें खुश करने का मतलब। इंजीनियर साहब दस बरस की नौकरी में मक्खन लगाने और मतलब हल करने की कला में सिद्धहस्त हो गए थे।

इंजीनियर साहब ने अपनी बात खत्म की। समिति के अफ़सर ने सरकारी बही में लिखा हुआ बयान सुनाना शुरू किया। बयान में लिखा था–

'संसद भवन की घड़ियाँ अभी कुछ महीने पहले बीमार रहने लगी थीं। उनके पुर्ज़ों में एक खास तरह की थकान पाई गई थी। बीमार घड़ियाँ निराश थीं। उनका कहना था कि संसद को जनता से जोड़े रहने के लिए वे सदैव सही समय देती रहीं, लेकिन संसदवालों को जनता के सुख-दुःख की, उसके भले-बुरे समय की फ़िक्र नहीं रही। जो लोग सत्ता में आए उन्होंने वादे भुला दिए। भारत की संसद की घड़ियाँ हताश हुईं और उन्होंने सत्याग्रह कर दिया। घड़ियों की हड़ताल शुरू हो गई।'

संसद की घड़ियों का बयान सुनकर सभी घड़ीसाज़ प्रसन्न हुए। उनके सामने धीरे-धीरे यह बात साफ़ हो चली थी कि सारे देश की घड़ियों ने जनता की हिमायत का झंडा अपने हाथ में ले लिया है। घड़ीसाज़ों की उत्कंठा बढ़ी थी। वे उतावले थे कि बाकी शहरों के घड़ीसाज़ क्या खबर लाए हैं। उन सबने खुशी में झूमते हुए कहा कि अब आगे की बात भी सुन ली जाए।

समिति के अफ़सर ने आगे की कार्रवाई के लिए कागज़ों में आगे के नाम देखने शुरू किए। अभी तक नाथद्वारा, कानपुर, काठियावाड़ व लेह-लद्दाख के घड़ीसाज़ों के बयान बाकी थे।

अध्याय 11

अब बारी थी, नाथद्वारा से आए हुए घड़ीसाज़ की। नाथद्वारा का घड़ीसाज़ बूढ़ा है। स्वभाव से धार्मिक है तथा अपने संतोष के लिए श्रीनाथ जी का प्रसाद हमेशा अपने साथ रखता है। दिल्ली आने पर भी समिति के सभी लोगों को उसने प्रसाद बाँटा था और कहा था, 'जय श्रीनाथ जी!'

उसके माथे पर लगे तिलक से यह स्पष्ट हो ही गया था कि वह श्रीनाथ जी का भक्त है। वह कुछ कहता, उससे पहले ही बीकानेर के बाबा रामनाथ ने सवाल दाग दिया– "आपके यहाँ तो श्रीनाथ जी की कृपा से सभी कुछ ठीक ही चल रहा होगा!"

"नहीं रामनाथ जी! ठीक कहाँ चल रहा है। घड़ियाँ तो वहाँ भी बंद हैं। घड़ियों ने यहाँ के महंतों व पंडों को चेतावनी दी थी कि वे सभी तीर्थयात्रियों के साथ समान व्यवहार करें। बड़े अफ़सरों को लाइन तोड़कर सबसे पहले प्रवेश न दें। धन्ना सेठों से पैसा लेकर उन्हें पीछे के दरवाज़े से दर्शन न कराएँ, लेकिन घड़ियों की चेतावनी धरी की धरी रह गई और यह सब ऐसे ही चलता रहा। घड़ियों का कहना था कि श्रीनाथ जी के दरवाज़े पर भी ऊँच-नीच

चलती रही और इन महंतों को श्रीनाथ जी ने सद्‌बुद्धि नहीं दी, तो घड़ियाँ इसके लिए आंदोलन करेंगी, सत्याग्रह करेंगी। हुआ भी ऐसा ही! महंतों व पंडों की नीयत सुधरी नहीं, भेदभाव, ऊँच-नीच चलता रहा और घड़ियों को सत्याग्रह शुरू करना पड़ा। समय का फेर है रामनाथ जी! श्रीनाथ जी भी अपने चाकर लोगों के झाँसे में आने लगे हैं।" थकी आवाज़ में नाथद्वारा के घड़ीसाज़ ने अपनी बात खत्म की।

उसका बयान भी बाकायदा दर्ज हुआ। उसके बाद कानपुर के घड़ीसाज़ का नंबर था। उससे जब अपनी बात बताने को कहा गया तो उसने कहा–

"अब कौन से बयान बाकी रह गए सरकार! घड़ियों की हड़ताल का साफ़ कारण तो सामने आ ही गया है। इस पर भी अगर कोई अमल होता है, तो देश की जनता का खूब भला हो जाएगा। हम सब चाहेंगे कि घड़ियों की पीड़ा को समझा जाए। उनकी बातों पर गंभीरता से विचार करके सही समय को लौटाया जाए। यदि इसमें अब थोड़ी भी देर होती है, तो परिणाम बहुत गंभीर होंगे।"

कानपुर का घड़ीसाज़ तुरंत कोई कदम उठाने की बात पर ज़ोर दे रहा था। उसकी बात सभी घड़ीसाज़ों को सही लगी थी और सबने उसका समर्थन किया था। काठियावाड़ के घड़ीसाज़ ने भी चेतावनी देते हुए कहा था–

"घड़ियों की माँगें पूरे देश की माँगें हैं। ये माँगें हर मामूली आदमी और उसके परिवार की माँगें हैं। आप फ़ौरन रपट तैयार कीजिए और 'अर्जेंट' का लेबल लगाकर तुरंत उसे चलता कीजिए। सरकार को कहिए कि एक दिन की भी देर न करे।"

काठियावाड़ के घड़ीसाज़ की बात का भी सभी ने समर्थन किया था। लेह-लद्दाख के घड़ीसाज़ ने भी घड़ियों की राय में राय मिलाकर समता के राज की माँग की थी। उसने घड़ियों के साथ ही अपना दुखड़ा रोया था तथा कहा था कि पहाड़ पर रहनेवालों की कौन खैर-खबर लेता है! पहाड़ के बीहड़ जीवन का वर्णन करते हुए वह

सरकार से अनुरोध कर रहा था कि समता का राज तुरंत कायम किया जाना चाहिए तथा समाज में सबको सामाजिक न्याय मिलना चाहिए। लेह-लद्दाख के घड़ीसाज की बात भी दर्ज कर ली गई थी। पूरी समिति की एक राय देखकर सरकारी अफ़सर ने सारी कार्रवाई की लंबी रपट तैयार की थी।

घड़ीसाजों की इस राष्ट्रीय कमेटी की यह लंबी रपट दूसरे दिन ही समय-मंत्री को भेंट की जानी थी। समय अब भी लौटा नहीं था। इसलिए यह तय किया गया कि यह समारोह समय-भवन के 'शून्य कक्ष' में किया जाए। समारोह वहीं हुआ तथा समय-मंत्री को पूरी रपट भेंट की गई। रपट से बात साफ़ थी कि घड़ियों की लड़ाई बुनियादी बातों पर टिकी है और इस लड़ाई में कोई सस्ता समझौता नहीं हो सकता। इस बात को ठीक से समझते हुए भी समय-मंत्री ने सरकारी तर्ज पर घड़ियों से अपील की थी कि वे अपनी हड़ताल समाप्त कर दें तथा काम पर लौट आएँ। समय-मंत्री ने आशा व्यक्त की कि घड़ियाँ उनकी बात मान लेंगी। शून्य कक्ष में उपस्थित सभी पत्रकारों, अफ़सरों तथा राजनेताओं की सहानुभूति समय-मंत्री के साथ थी।

इस संक्षिप्त आयोजन के बाद घड़ीसाजों की इस राष्ट्रीय कमेटी की राय पत्रकारों को बाँट दी गई। पत्रकार पहले से ताक में बैठे थे। उतावले हो रहे थे। उन्होंने समारोह के बाद घड़ीसाजों को घेर लिया था। दूसरे सवेरे सारे देश के अखबार सिर्फ़ इसी खबर से भरे थे। कई घड़ीसाजों के फ़ोटो भी मुखपृष्ठ पर छपे थे। पूरे देश की जनता ने जान लिया था कि घड़ियाँ हड़ताल पर क्यों हैं।

अध्याय 12

अखबारों में छपी खबर बच्चों ने भी पढ़ी थी। छोटू, मोटू व इनकी मित्रमंडली ने भी। सारे बच्चों को घड़ियों की बात पसंद थी, घड़ियों का तरीका पसंद था। बच्चों को अच्छा लगा कि घड़ियों ने उनकी वकालत की है। मास्टरों को अच्छा लगा कि घड़ियों ने उनकी भी वकालत की है। सभी गरीब लोगों को अच्छा लगा था कि घड़ियों ने दरिद्रनारायण की इतनी तगड़ी पैरवी की है। समाजवादी लोग खुश थे कि घड़ियों ने समता के राज की बात रखी है और कम्युनिस्ट खुश थे कि घड़ियों ने हर गरीब तबके के लिए रोटी-कपड़ा-मकान जैसी बुनियादी आवश्यकताओं को पूरा करने की पुरजोर माँग की है। सभी खुश थे।

सरकार भी नाराज नहीं थी। वह घड़ियों को मन ही मन ऐसे अहिंसक तथा शांतिपूर्ण आंदोलन के लिए धन्यवाद दे रही थी, लेकिन अभी तक सोच रही थी कि समय की यह एकता कैसे तोड़ी जाए और कैसे बीते समय को वापस लौटा कर लाया जाए!

सरकार सोच रही थी। उधर छोटू-मोटू की पूरी मंडली ने तय कर लिया था कि हम घड़ियों से दोस्ती करेंगे। गहरी दोस्ती करेंगे और घड़ियों के सपनों का भारत बनाने में जुट जाएँगे। घड़ियों की बात दरअसल भारत में आम जनता की बात है। उनको विश्वास है, वे एक मित्र के नाते घड़ियों से अपनी बात मनवा लेंगे।

इसी विश्वास के साथ एक सवेरे उगते सूरज से मिलकर यह मंडली समय को लौटाने चल दी थी। उगते हुए सूरज की आभा को कौन रोकेगा? छोटू सीधा बड़े घंटाघर के टॉवर पर चढ़ गया था तथा पेंडुलम हिला बैठा था। उसने उस घड़ी को मिलाया था, चाबी भरी थी और घड़ी चल पड़ी थी। जैसे ही इस घड़ी के घंटे की आवाज देश में गूँजी थी, बाकी घड़ियाँ भी चल पड़ी थीं। उगते हुए सूरज का साथ दिया था समय ने और बच्चों के विश्वास का आदर किया था समय ने। □□

लेखक-परिचय

रमेश थानवी

अगस्त 1945 में उत्तर-पश्चिमी राजस्थान के कस्बे फलोदी, जिला जोधपुर में जन्मे रमेश थानवी ने जोधपुर विश्वविद्यालय से दर्शन शास्त्र में एम.ए. किया। फिर प्रतिपक्ष साप्ताहिक में संपादन सहयोग दिया। वर्ष 1976 में इन्होंने राजस्थान प्रौढ़ शिक्षण समिति के तत्त्वावधान में प्रौढ़ शिक्षा के देश के पहले राज्य संदर्भ केंद्र की स्थापना की और 20 वर्ष तक इसके संस्थापक निदेशक के रूप में कार्यरत रहे।

प्रौढ़ शिक्षा का पहला पाठ पढ़ने रमेश जी 1976 में वियतनाम गए। 1980 में इंग्लैंड के साउथैम्प्टन विश्वविद्यालय के प्रौढ़ शिक्षा विभाग में सहयोगी फैलो के रूप में अध्यापन एवं प्रशिक्षण किया।

राजस्थान में महिला विकास, शिक्षाकर्मी, लोकजुंबिश जैसे कई शिक्षा कार्यक्रमों में इन्होंने संकल्पना स्तर से ही सक्रिय भागीदारी की। प्रौढ़ शिक्षा में पुस्तक प्रकाशन, शिक्षा-सामग्री सृजन एवं प्रशिक्षण के क्षेत्र में कई नवाचार भी किए।

अब तक इनकी बदलाव का अधिकार (लंबी कविता), दौड़ा-दौड़ा मन का घोड़ा, भोर भई व गुन गुन गुन (बाल गीत), नीली झील (कमलेश्वर की कहानी का लोकोपयोगी रूपांतर) तथा शिक्षा की परीक्षा पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। इनमें से बदलाव का अधिकार नौ भारतीय भाषाओं में भी उपलब्ध है। इन्होंने सत्यजित राय के सोने का किला का बांग्ला से अनुवाद किया है।

आजकल रमेश थानवी राजस्थान प्रौढ़ शिक्षण समिति, जयपुर में वरिष्ठ सलाहकार के रूप में कार्यरत हैं तथा समकालीन शिक्षा चिंतन की मासिक पत्रिका अनौपचारिका के संपादक हैं। □

2111

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्
NATIONAL COUNCIL OF EDUCATIONAL RESEARCH AND TRAINING

ISBN 978-81-7450-996-3